सिद्धिदात्री वाक् साधना

— श्रीराम शर्मा आचार्य

सिद्धि दात्री वाक्-साधना

☆

लेखक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

☆

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०११ मूल्य : ९.०० रुपये

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

जीभ सबके मुख में है और बोलते भी सभी हैं पर बोलना किसी-किसी को ही आता है। वाणी का सही उपयोग कोई-कोई ही कर पाते हैं। तत्त्व-वेत्ताओं ने शब्द को शिव और वाणी को शक्ति कहा है। इनका अनुग्रह जिस पर हो, उसे अमृतत्व उपभोक्ता ही कहना चाहिए

शब्द—कंठ और जिह्वा का उच्चारण भर ही नहीं हैं—और न जीभ कैंची की तरह दिनभर चलाने एवं अनर्गल बकवास करने के लिए बनाई गई है। इसमें अजस्र शक्ति का भंडार भरा पड़ा है। यह उच्चारण अपने को तथा दूसरों को कितना प्रभावित करता है, इसका मर्म जो समझ लेते हैं, वें एक-एक शब्द को नाप-तोल कर बोलते हैं और अपनी निश्छलता एवं श्रद्धा का समावेश करके वाणी को इतना प्रभावशाली बना देते हैं कि सुनने वाला प्रभावित हुए बिना नहीं रहता।

मुद्रक :
युग निर्माण योजना प्रेस,
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

परम कल्याणी—मंगलमयी वाणी

जीभ सबके मुख में है और बोलते भी सभी हैं, पर बोलना किसी-किसी को ही आता है। वाणी का उपयोग कोई-कोई ही कर पाते हैं।

तत्त्व-वेत्ताओं ने शब्द को शिव और वाणी को शक्ति कहा है। इनका अनुग्रह जिस पर हो उसे अमृतत्व उपभोक्ता ही कहना चाहिए।

किस प्रयोजन के साथ, किस मनःस्थिति में, किस विधि व्यवस्था के साथ, किस शब्द का उच्चारण करने से प्रतिक्रिया भौतिक पदार्थों पर एवं व्यक्ति पर क्या होती है। इस शब्द विज्ञान का सूक्ष्म अवगाहन करके ऋषियों ने मंत्र विद्या का आविष्कार किया। इसे वाणी का श्रेष्ठतम प्रयोग ही कह सकते हैं। जो वाणी का स्वरूप और उसका उपयोग जान सका वह बहिरंग में सुख और अंतरंग में शांति उपलब्ध करने में सफल होकर ही रहा है।

ऋग्वेद १६। ७। ४ में वाणी के उपयोग और रहस्य के बारे में संकेत करते हुए कहा गया है—

उत त्वः पश्यंत ददर्श वाचमुत त्वः श्रृण्वन्न श्रृणेत्येताम्। उतो त्वस्मै तन्वं विसस्रे जायेव पश्य उशती सु वासाः।

अर्थात्—बहुत लोग वाणी का चमत्कार देखते हुए भी आँखें बंद किए रहते हैं। कुछ इसका प्रभाव सुनते हुए भी कान बंद किए रहते हैं। किंतु जो उसे देखते और सुनते हैं उनके सम्मुख यह परा कल्याणी वाक् देवी अपने को समर्पित कर देती हैं।

शब्द कंठ और जिह्वा का केवल उच्चारण भर ही नहीं और न जीभ कैंची की तरह दिनभर चलाने एवं अनर्गल बकवास करने के लिए बनाई गई है। इसमें अजस्र शक्ति का भंडार भरा पड़ा है। यह उच्चारण अपने को तथा दूसरों को कितना प्रभावित करता है, इसका मर्म जो समझ लेते हैं वे एक-एक शब्द को नाप-तोल कर बोलते हैं और अपनी निश्छलता एवं श्रद्धा का समावेश करके इतनी

प्रभावशाली बना देते हैं कि सुनने वाला प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। वाणी वही है जो दूसरों का हृदय छू सके। शब्द वही है जो निकलने के साथ अपने को हलका करे और शांति की संभावना खोजने के लिए मुख से बाहर निकले। अनर्गल बकवास तो अपने शक्ति प्रवाह को ही नष्ट कर सकता है। अनुपयुक्त और दुर्भाव भरे शब्द दूसरों को तीर की तरह घायल करते हैं और अपने लिए प्रतिशोध एवं विद्वेष की प्रतिक्रिया लेकर लौटते हैं। द्रौपदी के दुर्योधन से अपमान और तिरस्कार भरे कुछेक शब्द कह देने का परिणाम महाभारत के रूप में सामने आया और उसमें १८ अक्षोहिणी का विनाश हो गया। हममें से कितने ही अकल्याणकारी बचन दुर्बुद्धि से भरे बोलते हैं और अपने पैरों में गड़ने के लिए काँटे बोते हैं।

वाणी का उच्चारण करते हुए किस बात का ध्यान रखा जाए। इस संदर्भ में ऋग्वेद १०। ८१। २ की शिक्षा हृदयंगम करने ही योग्य है—

सुर्क्तुमव तितउना पुनंतो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत। अत्रा सखाय: संख्यानि जानते यद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि।

अर्थात्—बुद्धिमान लोग इस वाणी का प्रयोग चुने हुए शब्दों में करते हैं। छलनी से छानकर जैसे भूसी अलग कर दी जाती है वैसे ही मन से शब्दों को छानकर जो कहना चाहिए वे उतना ही कहते हैं।

वाणी की गरिमा बनाए रखने और उसमें प्रभावशीलता भरे रहने के लिए यह आवश्यक है कि मुख खोलने से पहले विचार कर लिया जाए कि जो हम कहना चाहते हैं वह सद्‌भावनायुक्त है या नहीं, इसमें छल, व्यंग, क्रोध या तिरस्कार तो छिपा नहीं है। इसे कहने से सुनने वाले का अकल्याण तो न होगा। इतनी बात को विचारने के पश्चात् जितना आवश्यक एवं हितकर हो उतना ही बोला जाए तो असत्य, छल आदि कितने ही वाक् दोषों से बचा जा सकता है और प्राणी के प्रभाव एवं तेजस् को अक्षुण्ण रखा जा सकता है।

जिह्वा को सरस्वती का निवास स्थान कहा गया है। उससे मृदुल, मधुर, हितकर, सत्ययुक्त सद्‌भावना—संपन्न वचन बोले जाएँ तो उन्हें अमृत बूँदों की तरह ग्रहण करने के लिए लोग लालायित रहते हैं। उससे प्रकाश ग्रहण करते हैं और दुर्भावनाओं के कलुष धोकर अपनी पवित्रता में अभिवृद्धि करते हैं। यदि शब्द की गरिमा को समझते हुए साधारण

वार्तालाप भी नपे तुले शब्दों में किया जाए तो मंत्र के समान ही चमत्कारी प्रभाव उत्पन्न करता है। जिस मंत्र शक्ति से देवताओं को द्रवित और आकर्षित किया जा सकता है, और उन्हें अनुग्रह सहयोग करने के लिए आमंत्रित सहमत किया जा सकता है तो उससे साधारण मनुष्य को क्यों प्रभावित न किया जा सकेगा शर्त इतनी ही है कि वाणी को सरस्वती का प्रतीक मानकर उसका उपयोग श्रेष्ठतम आधार पर ही किया जाए। तैत्तिरीय ब्राह्मण में एक ऋचा आती है।

वाचं देवा उम जीवंति विश्वे वाचं गंधर्वाः पशवे मनुष्याः वाचीमा भृवनान्यपिता सानो हवं जुषतामिंद्र पत्नी।

अर्थात्—इस वाणी के आधार पर ही—मनुष्य और देव गंधर्व जीवन धारण किए हुए हैं। यह सारा ब्रह्मांड उस वाणी में समाहित है। इस इंद्र जैसी विभूतियों से संपन्न कर देने वाली कल्याणी वाणी से ही हम प्रीति करें। मित्र और शत्रु बनाने की क्षमता से संपन्न वाणी का जो दूसरों का दिल दुखाने, भ्रमित करने एवं छलने के लिए बिच्छू के डंक की तरह उपयोग कट्टरता है, वह अपने शत्रु ही बढ़ाता है, अपने लिए अश्रद्धा और बैर विरोध ही उत्पन्न करता है। ऐसे लोगों की प्रगति रुक जाती है और प्रतिभा मरणशील, कुंठित होने लगती है। किंतु सद्भावना, सज्जनता और सहानुभूति भरे श्रेय पथ पर प्रेरित करने वाले ज्ञानवर्धक वचन ही बोलते हैं उनके लिए मित्रों की संख्या में कमी नहीं रहती। सहयोगी और सहचरों से वे घिरे रहते हैं। स्वर्ग लोक में अमृत सुना जाता है, पर उसका प्रतीक जिह्वा के अग्रभाग पर भी बताया गया है। सांत्वना और प्रेरणा भरे शब्द अमृत बिंदु के समान ही हैं। जिसकी कुछ बूँद पाने वाला पुलकित हो जाता है और उस अनुदान के प्रति सदा कृतज्ञ बना रहता है। धन आदि की महानता लोग भूल जाते हैं पर मधुर व्यवहार को भुला सकना किसी के लिए संभव नहीं होता यहाँ तक कि दुष्ट दुरात्मा भी ऐसी मधुरता के वशीभूत हो जाते हैं। इसलिए वाणी को जीवनदात्री कहा है। मधुर वचनों को नीतिकारों ने वशीकरण मंत्र कहा है और कौए तथा कोयल का उदाहरण देते हुए यह बताया है कि कौआ किसी को हानि न पहुँचाते हुए भी अपनी कर्कश अभिव्यक्तियों के कारण तिरस्कृत होता है और कोयल किसी को कुछ न देते हुए भी केवल वाणी की मधुरता के कारण सबकी प्रिय भाजन बनती है।

आकाश की तन्मात्रा शब्द है। शब्द विद्या का—मंत्र विद्या का जो मर्म समझते हैं वे ब्रह्मांड में संव्याप्त शक्तियों, सिद्धियों और विभूतियों से संपन्न हो जाते हैं। इंद्र के ऐश्वर्य की तरह वाणी का यह शब्द विद्या के अनुरूप प्रयोग उपासना क्षेत्र में भी समृद्धि और प्रगति का द्वार खोलता है।

वाणी मात्र शब्दोच्चारण को ही नहीं कहते वरन् उसके साथ जो प्रयोजन, भाव, प्रयोग जुड़ा रहता है वस्तुतः वही उसका प्राण है। इन प्रयोजनों से युक्त यदि बोला जाए तो प्रचंड प्राण प्रवाह के रूप में वह दिव्यता जिन अंतःकरणों से निकलती है उसका स्वयं का जिसके लिए लक्ष्य किया गया है उसका और समस्त संसार का भला करती हैं। अंतःकरण से प्रादुर्भूत प्रस्फुटित होने वाली वाणियों के नाम परा पश्यंति और मध्यमा हैं। चौथी बैखरी है जो मुख द्वारा उच्चारित की जाती है। इस वर्गीकरण को ऋग्वेद १। १६४। ४५ में इस प्रकार प्रतिपादित किया गया है।

जीभ से होते रहने वाली बक-झक और वाचालता से मात्र मनोरंजन और समयक्षेप हो सकता है। उसके पीछे अहंकार, दुर्भाव भरे हों तो अपना और दूसरों का अहित भी हो सकता है। पर यदि उसका प्रयोग सद्भावना सुमधुरता युक्त सज्जनता से संतुलित करके किया जाए तो अपना पराया और सबका कल्याण उन अमृत वचनों से हो सकता है।

❑ ❑

वाणी का सदुपयोग सीखें

मनुष्य में अन्य सब प्राणियों से एक विशेषता यह है कि वह वाणी द्वारा अपनी अनुभूति और भावनाओं को अच्छी तरह प्रकट कर दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। यह परमात्मा की मनुष्य को सबसे बड़ी देन है। पर हम देखते हैं कि आजकल लोग इस अमूल्य निधि का नित्य दुरुपयोग कर संसार में अनेक प्रकार के कष्ट, अपमान,

निंदा आदि सहन कर रहे हैं तथा अपने जीवन को भी गर्हित और पतित बनाते जा रहे हैं। हमें आज इसी विषय पर गंभीरतापूर्वक सोचना है कि हम अपनी वाणी के दुरुपयोग को रोककर उसे किस तरह सुसंस्कृत, मंगलकारी, सर्वकल्याणकारी बनावें ताकि उसके द्वारा संसार में हम सर्वत्र असत्य, छल, कपट, पीड़ा और असंतोष के स्थान पर स्वर्गीय आनंद और उल्लासपूर्ण वातावरण का निर्माण कर सकें।

शास्त्र में शब्द को ब्रह्म की उपमा दी गई है। वास्तव में शब्द में बड़ी सामर्थ्य है। जब किसी शब्द का उच्चारण करते हैं, तो उसका प्रभाव न केवल हमारे गुप्त मन पर अपितु सारे संसार पर पड़ता है, क्योंकि शब्द का कभी लोप नहीं होता, प्रत्येक शब्द वायुमंडल में गूँजता रहता है और वह समानधर्मी व्यक्ति के गुप्त मन से टकराकर उसमें तदनुकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। यह अनुभव सिद्ध बात है कि जिसके प्रति हम शब्दों द्वारा अच्छी भावना प्रकट करते हैं वह व्यक्ति हमारे अनजाने ही हमारा प्रेमी और शुभ चिंतक बन जाता है। इसके विपरीत जिसके बारे में हमारे विचार या शब्द कलुषित होते हैं वे अनायास ही हमारे अहित चिंतक शत्रु बन जाते हैं। अर्थात् शुभ एवं मंगल वाणी से आप्तजनों एवं सर्वसाधारण समाज में सद्भावना का प्रचार होता है जिससे समाज का वातावरण आनंद और उल्लासपूर्ण बनता है।

अच्छे और बुरे शब्दों का मनुष्य के जीवन पर बड़ा गहरा असर पड़ता है। अच्छे शब्द बोलने वाले व्यक्ति प्रायः निर्भय, प्रशांत, प्रफुल्लित एवं आनंदित पाए जाते हैं जबकि कटु एवं बुरे शब्दों का उच्चारण करने वाले व्यक्ति क्रोधी, ईर्ष्यालु, दंभी, असंतुष्ट एवं कर्कश स्वभाव के होते हैं।

बुरे एवं गंदे शब्दों के उच्चारण का अबोध बालकों पर बड़ा बुरा असर पड़ता है, जिससे उनके चरित्र का क्रमशः पतन होता जाता है। क्योंकि छोटे बालक जैसे शब्द बड़ों के मुँह से सुनते हैं वे उन्हीं का बिना अर्थ समझे बूझे अनुकरण करने लगते हैं। परिणाम स्वरूप उनके गुप्त मन में उन बुरे शब्दों के संस्कार बीज रूप में जम जाते हैं, जो बड़े होने पर उनको पतन के गहरे गर्त में गिरा देते हैं। आजकल बालकों में सिनेमा के अश्लील एवं गंदे गीतों को गुन-गुनाने की प्रवृत्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह बड़ी ही अनिष्टकर बात है आगे चलकर इस प्रकार के अश्लील भाव संस्कार

के रूप में उनके मन को कलुषित कर उनके जीवन को ही मटियामेट करने की सामर्थ्य रखते हैं।

इसके विपरीत सुमधुर, शांत एवं पवित्र शब्दों का उच्चारण करने वाले व्यक्ति अपने शब्दों द्वारा न केवल अपने विचारों, भावनाओं एवं संस्कारों को परिमार्जित करते हैं अपितु अन्य अनेक व्यक्तियों को प्रभावित कर उनके जीवन में भी नवीन स्फूर्ति, नवीन प्रेरणा एवं नया मोड़ उत्पन्न करते हैं। अच्छे लेखों एवं कविताओं से अनेक व्यक्तियों को सत्प्रेरणाएँ मिली हैं और उनका जीवन परिवर्तन हुआ है, इससे शब्दों की अतुल सामर्थ्य की कल्पना की जा सकती है।

हमारे मनस्वी ऋषियों ने मंत्र-शक्ति द्वारा अनेक आश्चर्य जनक कार्य संपन्न किए हैं। मंत्र आखिर सशक्त, तेजस्वी एवं गूढ़ शब्दों की ध्वनियाँ ही तो हैं, इन शब्दों से न केवल मानसिक वरन् भौतिक जगत् में भारी उलटफेर हुए हैं। इसका एकमात्र कारण मंत्रों के पीछे ऋषियों की अनुभव जन्य ज्ञान-युक्त वाणी की प्रबल शक्ति है।

मंत्रों के नियमित और श्रद्धापूर्वक जप से नई शक्ति और अनेक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं इसका एकमात्र कारण यह है कि उत्तम एवं पवित्र शब्दों में महान् गुणकारी शक्ति समाई रहती है और उसके द्वारा एक ऐसा अदृश्य वातावरण पैदा होता है, जो जीवन की दिशा को ही मोड़ देता है। आप जिस प्रकार के शब्द का उच्चारण करेंगे वैसा ही भाव आपके मन और शरीर के अंगों को प्रभावित करेगा और आपकी आत्मा भी उसी उच्च या निम्न-स्थिति में आ जाएगी।

तात्पर्य यह कि हमारा प्रत्येक शब्द हमारे अंतःकरण पर एक अमिट गुप्त छाप छोड़ जाता है, जो हमारे स्वभाव और चरित्र के निर्माण में योग देता है, हमारे मनीषियों और उपनिषदों ने प्रत्येक शब्द के प्रति अत्यंत सावधान रहने का संकेत किया है क्योंकि शब्दों में अतुल सामर्थ्य है। जो काम हम वर्षों में नहीं कर पाते उसे मनस्वी और पुरुषार्थी व्यक्ति अपने चुने हुए शब्दों की शक्ति से अल्पावधि में संपन्न कर डालते हैं। इसका कारण भी यही है। अतएव हमें शब्दों की इस असीम सामर्थ्य का ध्यान रखते हुए वाणी को सदा मधुर, पवित्र और हितकारी बनाए रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

तैतिरीय उपनिषद् में कहा गया है।

'जिह्वा में मधुमत्तमा' अर्थात् हे ईश्वर ! मेरी यह जिह्वा सदा मधुर वचन बोले। मैं कभी कटु, कर्कश और कुवचन द्वारा अपनी वाणी को कलंकित न करूँ। अतः हम सदा अपने जीवन में, घर में समाज में, प्रत्येक व्यवहार के समय ऐसे ही शब्दों का प्रयोग करें जो मधुर शिष्ट, उत्साहप्रद एवं हितकारी हों। गोस्वामी तुलसीदासजी ने क्या ही अच्छा कहा है—

तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
वशीकरण एक मंत्र है, तज दे वचन कठोर।।

मीठे और हितकारी वचन वास्तव में ऐसे वशीकरण मंत्र हैं, जिनसे हमारे इष्ट-मित्र, स्वजन परिजन ही नहीं सारे संसार के लोग हमारी ओर आकर्षित होकर हम पर अपना स्नेह लुटा सकते हैं। फिर क्यों व्यर्थ ही हम कटु, अभद्र एवं अशिष्ट शब्दों के उच्चारण द्वारा अपने चारों ओर के वातावरण को कलुषित और अमंगल जनक बनाकर अपने तथा दूसरों के जीवन को कष्टप्रद एवं अशांत बनाने की चेष्टा करें।

मन में सदा अच्छे संकल्प करते रहिए और वाणी से सदा मधुर एवं हितकारी वचन ही बोलिए। अपने मन को हमेशा सत्संकल्पपूर्ण वाणी से संबोधित करते हुए उसे सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहें। मन को एकाग्र और शांत कर एकांत में ऐसे शब्दों का उच्चारण कीजिए जिससे उसे नई चेतना और नई प्रेरणा मिले। जैसे कहिए कि—"मेरा मन असीम शक्ति का भंडार है, मैं उससे अपनी इच्छानुकूल कार्य ले सकता हूँ। मेरा मन इंद्रियों का दास नहीं, उनका स्वामी है। वह इंद्रियों को विषयों की ओर कदापि नहीं बढ़ने देगा। मन इंद्रियों का स्वामी है पर मैं मन का भी स्वामी हूँ अर्थात् मन पूर्णतः मेरे वश में है। मैं उसे हर प्रलोभन से बचाए रखने की क्षमता रखता हूँ और उसे कुमार्ग से हटाकर सन्मार्ग पर चलाने की भी मुझ में पूर्ण शक्ति है। सारी इंद्रियाँ और मन मेरे आज्ञाकारी हैं और मैं उन्हें हरदम ठीक रास्ते से चलने की ही प्रेरणा दिया करता हूँ।"

आप इस प्रकार के आत्म-निर्देशपूर्ण शब्दों द्वारा अपनी मानसिक शक्ति और आत्मबल को पर्याप्त मात्रा में बढ़ाकर जीवन को पवित्र, सुखी और संपन्न बना सकते हैं।

शब्द अमृत और विष दोनों का काम करते हैं। जो वाणी सत्य, उत्साह तथा उल्लास बढ़ाने वाली, निष्कपट, मधुर तथा हितकर होगी वही अमृतमय कहलाएगी। इसके विपरीत जिस वाणी में कठोरता, अहमन्यता, उपहास, कटुता, द्वेषभाव, छिछोरापन आदि होगा वह अपने और दूसरों के लिए भी विषमय एवं हानिकारक होगी।

वाणी का सदुपयोम कभी न किया जाए। हो सके तो सप्ताह में या महीने में एक दिन का मौन रखें और उस दिन केवल आत्म-चिंतन, सद्चिंतन में मन को लगाएँ। मौन में बड़ी शक्ति है। जो व्यक्ति वाणी का संयम कर यथा संभव मौन का पालन करता है उसकी वाणी में बड़ा रस आता है। उतना बोलिए जितना आवश्यक हो। वाणी के दुरुपयोग से हमारी शक्ति का एक बड़ा अंश नष्ट हो जाता है। इसलिए जैसे इंद्रिय संयम के लिए ब्रह्मचर्य आदि विधान हैं उसी तरह वाणी के संयम के लिए मौन की साधना बताई गई है। महात्मा गांधी ने कहा है—"मौन सर्वोत्तम भाषण है। अगर बोलना ही हो, तो कम से कम बोलो। एक शब्द से ही काम चल जाए, तो दो न बोलो। फ्रैंकलिन के शब्दों में—"चींटी से अच्छा कोई उपदेश नहीं देता और वह मौन रहती है।" कार्लाइल ने कहा है—"मौन में शब्दों की अपेक्षा अधिक वाक् शक्ति होती है।

हम जीवन में जितना अनर्थक प्रलाप करते हैं, निरर्थक शब्द बोलते हैं उतने समय में खूब काम किया जाए तो उतने में एक नया हिमालय पहाड़ बन जाएगा। शब्दों की इस अथाह शक्ति को व्यर्थ ही नष्टकर क्या हम दीन नहीं बन रहे हैं। यदि इन शब्दों का उपयोग हम किसी को सांत्वना देने में, भगवद् भजन, प्रभु नाम स्मरण, संगीत, जप, कीर्तन आदि में करें तो हमारा और समाज का कितना भला हो ? साथ ही हम वाचालता से उत्पन्न दोष, जिनसे लड़ाई, झगड़े, क्लेश ईर्ष्या द्वेष आदि का उदय होता है, उनसे बच जाएँ।

वाचालता, व्यर्थ प्रलाप चाहे वह किसी प्रेरणा से क्यों न हो हानिकर हैं। इस संबंध में एकेन रिवले ने लिखा है—'अंडे देने के बाद मुर्गी यह मूर्खता करती है कि वह चहचहाने लगती है। उसकी चहचहाहट सुनकर डोम कौवा आ जाता है वह उसके अंडे भी छीन लेता है तथा उन वस्तुओं को भी खा जाता है जो उसने अपनी

भावी संतान के लिए रखी थीं।' कहावत है—'इसी तरह वाचाल व्यक्ति को कहा जा सकता है।'

संत ईसा ने कहा था—'अपने द्वारा बोले गए प्रत्येक बुरे शब्द के लिए मनुष्य को फैसले के दिन सफाई देनी होगी। और बुरे शब्दों से हम मौन के द्वारा ही बच सकते हैं।'

किसी से लड़ाई झगड़ा हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है। किंतु ईर्ष्यावश दूसरे की किसी बुराई या गल्ती को लेकर उसके संबंध में दूषित प्रचार करना ठीक नहीं। लड़ाई शांत होने पर पुनः मधुर संबंध स्थापित हो सकते हैं। किंतु इस तरह का घृणापूर्ण प्रचार एक विषैली प्रतिक्रिया पैदा कर देता है। इससे दूसरे पक्ष के लोग तो कट्टर दुश्मन बन ही जाते हैं साथ ही अन्य लोग भी दूषित प्रचार से प्रचारक को संदेह और शंका की दृष्टि से देखते हैं और कोई जिम्मेदारी या सहयोग देने में हिचकिचाते हैं। कीचड़ के छींटे और उसकी बदबू से सभी दूर ही रहना चाहते हैं।

प्रयत्न तो यह करना चाहिए कि कोई लड़ाई झगड़ा ही न हो इसके बावजूद भी ईर्ष्या, द्वेष को स्थाई बनाने, उसे प्रोत्साहन देने के लिए कोई हथकंडे न अपनाए जाएँ। क्योंकि बढ़ा हुआ ईर्ष्या, द्वेष कभी न कभी मौका लगने पर अपने दुष्परिणाम अवश्य पैदा करता है। आवश्यकता इस बात की है कि किसी भी कारण दूसरों से हुए लड़ाई, झगड़े, मनोमालिन्य की खाई को पाट कर पुनः प्रेम संबंध बनाए जाएँ। अपनी कोई भूल हो तो उस पर विचार करके शुद्ध हृदय से क्षमा माँग लेनी चाहिए। कहीं कुछ विरोध भी करना पड़े तो वह द्वेष बुद्धि से रहित होकर नम्र एवं दृढ़ शब्दों में किया जाए। सदुद्देश्य और सदाशयता से किया गया विरोध भी सत्परिणाम पैदा करता है। वह शत्रु के हृदय में भी सम्मानजनक स्थान प्राप्त करता है।

सदैव सबसे मीठा बोला जाए। किसी ने कहा भी है—

कागा काको धन हरे, कोयल काको देय।
मीठी वाणी बोलकर, जग बसमें कर लेय।।

वास्तव में मीठे वचन बोलकर सारे जग को अपने वश में किया जा सकता है। दूसरों को अपना बनाया जा सकता है। लोगों के हृदय में स्थान पाया जा सकता है। नम्र और मीठे शब्दों से

दुश्मन भी अपने बन जाते हैं। इसके विपरीत कटु तीक्ष्ण, जली-कटी बातें, व्यंग-वाणों से भी मित्र शत्रु बन जाते हैं।

लोकप्रियता के इच्छुकों को आलोचना नहीं करनी चाहिए यदि किसी का कोई व्यवहार आपको नहीं जँचता हो तो उसकी आलोचना न करें। संभव है वह गल्ती पर न हो और आप ही गल्ती पर हों। आपकी आलोचना वृत्ति से लाभ नहीं हानि ही होगी। संभव है कोई व्यक्ति भूलवश या स्वाभाविक असमर्थता अथवा किसी अन्य कारण से कुछ गल्ती पर हों, जिसे समझने पर वह उसे दूर भी कर लेगा किंतु की गई आलोचना से कोई लाभ न होगा उल्टा दोनों में मनोमालिन्य पैदा हो जाएगा।

आज के बौद्धिक युग में प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वतंत्र बुद्धि से सोचता है और जो ठीक समझता है वही करता है। इसलिए दूसरों को आज्ञा देने की प्रवृत्ति नहीं रखना चाहिए। यदि किसी से कुछ कराना हो तो उसे आज्ञा न देकर अपनी बात सुझाव के रूप में प्रकट करनी चाहिए और उस पर विचार करके करने की स्वतंत्रता दूसरों पर ही छोड़ देनी चाहिए। बात-चीत के दौरान दूसरों को कोई महत्त्व न देकर अपनी बात धुँआधार रूप में कहना भी ठीक नहीं। इससे कहासुनी और उत्तेजना की स्थिति पैदा होती है। बातचीत के समय वाक् संयम और समझदारी से काम लेना चाहिए। यदि कोई बात सही और तर्क संगत है तो अपनी हठवादिता छोड़कर उसे मान लेना चाहिए, इससे दूसरों की दृष्टि में मूल्य बढ़ जाता है और प्रतिपक्षी का भी सहयोग, आत्मीयता मिल जाती है। अपने मित्र सहयोगी संपर्क में आने वाले व्यक्तियों के स्वभाव, आदतों का अध्ययन कर उनके अनुकूल बात करने का ध्यान रखना चाहिए। ऐसी कोई भी बात यकायक नहीं कहनी चाहिए जो दूसरों को बुरी लगे।

अज्ञान और अविवेक से तमसाछन्न मनोभूमि के रजोगुणी और तमोगुणी प्रकृति के मनुष्य ही आजकल संसार में अधिक मात्रा में देखने में आते हैं। वे सत्यवादी की भलमनसाहत का अनुचित लाभ उठाकर अपनी दुष्टता को और भी तीव्र कर सकते हैं और अपने दुष्ट मनोरथ में और भी अधिक आसानी से सफल हो सकते हैं। इसलिए व्यावहारिक सत्यवादी को अपनी नीयत शुद्ध रखते हुए भी—सत्य के प्रति निष्ठा रखते हुए भी—यह ध्यान रखना पड़ता है

कि उसकी सत्यवादिता का कहीं दुरुपयोग न हो। जहाँ ऐसा खतरा होता है वह सोच-समझकर मुँह खोलता है और नपी-तुली उतनी ही बात कहता है जिससे काम भी चल जाए और कुपात्रों को अनावश्यक लाभ भी प्राप्त न हो।

व्यावहारिक सत्य भाषण के मूल में परहित की, विश्व कल्याण की भावना रहनी चाहिए। कई बार ऐसे धर्म संकट सामने आ खड़े होते हैं कि बोलने से दुष्ट लोग उसका अनुचित लाभ उठाते हैं और निर्दोष को सताने तथा अपनी स्वार्थ साधना का प्रयोजन सिद्ध करते हैं। ऐसे अवसरों पर भाषण को नहीं भावना को—इसके परिणाम को ही सत्य का आधार माना जाएगा।

योग दर्शन में इस गुत्थी को भी सुलझाया गया है। २।३० के व्यास भाष्य में कहा गया है कि—

ऐषा सर्वभूतो प्रकारार्थ प्रवत्ता न भूतोपद्याय यदि चैवमथ्वमिधीय माना भूतोपद्यातरव स्यातू न सत्य भवेत पाप मेव। तेन पुण्यासे पुण्य प्रतिरूप कृपा कष्टं तमः प्रान्पुयाम, तस्यात् परीक्ष्य सर्वभूत हितं सत्यं ब्रुयात्।

अर्थात्—सत्य का प्रयोग जीवों के हित के लिए करना चाहिए। अहित के लिए नहीं। जिसके बोलने से प्राणियों की हानि होती हो वह सत्य होते हुए भी असत्य एवं पाप ही माना जाएगा। ऐसा अविवेक पूर्ण सत्य बोलने में दूसरे निर्दोषों को कष्ट उठाना पड़ता है और वक्ता को पाप लगता है। इसलिए परिस्थिति को भली प्रकार विचार कर विवेक का सहारा लेकर सबके लिए कल्याणकारी हो ऐसी वाणी ही बोलें।

कसाई के हाथ से छूटकर गाय भागी जा रही हो और पीछे ढूँढ़ता हुआ कसाई आ जाए। पूँछे कि गाय किधर है ? तो सत्य बोलने पर गौ हत्या होती है और कसाई के पाप भार में और भी अधिक बढ़ोत्तरी होती है, गाय के बधिक बाध की पीड़ा और अधिक नरक कष्ट मिलने का दुष्परिणाम। ऐसा सत्य बोलना किस काम का ? इसलिए विवेक और परिणाम का ध्यान रखकर ही ऐसे अवसरों पर सत्य बोलना चाहिए।

उपरोक्त प्रकार का एक संकट आ पड़ने पर एक दर्शक ने बड़ी चतुरता पूर्वक जवाब दिया। वह सुनने ही लायक है—

या पश्यति न सा ब्रूते या ब्रूते सा न पश्यति।
अहो व्याध स्वकार्यार्थिन किं दृच्छसि पुनः पुनः।।

जिसने देखा है वह बोलती नहीं, जो बोलती है उसने देखा नहीं। स्वार्थी बधिक ! फिर तू बार-बार क्यों पूछता है।

भागती हुई गाय को आँखों से देखा था सो आँखें तो बोलती नहीं। जीभ बोलती है, पर उसने देखा नहीं। इसलिए गाय किधर गई उसका कौन उत्तर दे ? वाक् चातुर्य में असत्य भाषण का दोष बचाते हुए भी अधर्म न होने देना इसे एक बुद्धिमत्ता ही कहा जाएगा।

ऐसे धर्म संकटों के अवसर पर शास्त्रकार भी भावना सन्निहित सत्य को ही प्रधानता देता है और शब्द सन्निहित सत्य की उपेक्षा करता है—

सत्यं न सत्यं खलु यत्र हिंसा,
दयान्वित चानृत मेव सत्यम्।
हित नराणां भवतीय येन,
तदेव सत्यं न चान्यथैव।।

जिससे हिंसा की वृद्धि होती हो वह सत्य, सत्य नहीं। जिससे दया धर्म का पोषण हो वह सत्य ही सत्य है। जिससे प्राणियों का हित होता हो वही सत्य है। जिससे अहित होता हो तो वह सत्य होते भी असत्य ही है।

नीतिकारों ने स्थान-स्थान पर इसी तथ्य की पुष्टि की है—

ना पृष्टः कस्यचिद् ब्रुयान्नचन्यायेन पृच्छतः।

बिना पूछे या अनीति पूर्ण उद्देश्य के लिए पूछने पर सत्य भी न कहना चाहिए।

कोई चोर पूछे कि आपके पास कितना धन है और वह कहाँ रखा है तो सत्य बोलने पर अपना धन चले जाने पर उस चोर की दुष्टता का पोषण होने का खतरा है। इसी प्रकार सेना के गुप्त भेदों को कोई सैनिक यदि सत्य बोलने के नाम पर प्रकट कर दे और उससे लाभ उठाकर शत्रु पक्ष आक्रमण कर दे तो यह सत्य भाषण अपराध एवं पाप की श्रेणी में ही माना जाएगा। इस प्रकार का सत्य बोलने वालों को सैनिक न्यायालय में कठोर दंड की व्यवस्था होती है। राजकीय गुप्तचर विभाग

के कर्मचारी बड़े-बड़े पापों, अपराधों और षड्यंत्रों का पता लगाने के लिए छद्मवेष बनाकर छद्म परिचय देकर भेदों का पता लगाते हैं। इन भेदों के मालूम होने से न्याय तथा धर्म की रक्षा होती है। इसलिए इन्हें प्रशंसनीय ही ठहराया जाता है।

योगी अरविंद ने लिखा है—

"जिन्हें हमारी प्रवृत्तियों एवं योजनाओं को जानने का कोई प्रयोजन नहीं है, जो उन्हें समझते भी नहीं, जो उस जानकारी को प्राप्त कर अपनी हानि ही करेंगे, उन्हें अपनी प्रवृत्तियों एवं योजनाओं को बताने की क्या आवश्यकता ? आध्यात्मिक रहस्यों को प्रायः गुप्त रखा जाता है यह उचित भी है। अपने आश्रम के क्रिया-कलापों के बारे में हम बाहरी लोगों को पता नहीं लगने देते, इसका अर्थ यह नहीं कि हम कोई झूठ बोलते हैं। बहुधा योगी लोग अपने आध्यात्मिक अनुभवों को—विशेष अधिकारी व्यक्तियों के अतिरिक्त और किसी को नहीं बताते। यह गोपनीयता अध्यात्म का एक चिर प्राचीन नियम है। ऐसा कोई धार्मिक या नैतिक नियम नहीं है जो अपनी हर बात को हर किसी के सामने प्रकट कर ही देने का आदेश देता है।"

असत्य नहीं हमें सदा सत्य ही बोलना चाहिए। पर इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि अपनी प्रत्येक बात हर किसी से कह ही देनी चाहिए। आवश्यकतानुसार मौन रहकर या उत्तर देने में इंकार करके आवश्यक तथ्यों को छिपाने की अनुमति है। क्योंकि जिनकी मनोभूमि का समुचित विकास नहीं हुआ है वे उस गोपनीय तथ्य का दुरुपयोग कर सकते हैं उसे विकृत करके हानिकारक बना सकते हैं।

अणु-बम आदि के रहस्य प्रायः छिपाकर रखे जाते हैं। फौजी जानकारियाँ तो प्रायः गुप्त ही रखी जाती हैं। राजकीय बजट पेश होने से पूर्व यदि उसका भेद फूट जाए तो चतुर लोग उस आधार पर व्यापार करके करोड़ों रुपया कमा सकते हैं, और जिन विचारों को उस प्रकार की पूर्ण सूचना उपलब्ध नहीं हुई है वे अकारण भारी हानि उठा सकते हैं। इसलिए बजट के भेद को समय से पूर्व प्रकट किया जाना इसी प्रकार का अपराध माना जाता है।

महाभारत में भीष्म का एक कौशल अपराजेय था। पांडव उससे बहुत घबराए तब युधिष्ठिर ने किसी प्रकार बातों ही बातों में चतुरता

पूर्वक भीष्म से उनकी युद्ध नीति को पूँछ लिया। उन्होंने बता दिया कि—"मैं शस्त्र त्यागी, घायल होकर पृथ्वी पर हुए, भागते हुए, शरणार्थी, अंग-भंग, स्त्री तथा नपुसंक पर हथियार नहीं चलाता।" इस जानकारी का पांडवों ने पूरा-पूरा लाभ उठाया और शिखंडी नामक नपुंसक को भीष्म के सामने लड़ने खड़ा कर दिया। भीष्म उस पर शस्त्र चला नहीं रहे थे। उधर अर्जुन ने शिखंडी के पीछे छिपकर भीष्म पर बाण चलाए और उन्हें मार डाला। सत्य को अनावश्यक रूप से प्रकट कर देने पर कई बार सत्यवादी को इस प्रकार की हानि उठानी पड़ती है जैसी भीष्म को उठानी पड़ी।

सत्य वचन ही उचित है। सत्य का पालन उचित है। व्यावहारिकता का आचरण करना हो तो भी कुछ उच्च उद्देश्यों के लिए यदाकदा आवश्यक शब्द कौशल को छोड़कर शेष साधारण जीवन में सही सत्य ही बोलना चाहिए। सत्य में निष्ठा रखना सत्यनारायण का रूप है। जो सत्य का उपासक है वह प्रकारांतर में सत्यनारायण भगवान की ही आचारात्मक पूजा करता है, जो केवल भावात्मक पूजा से कहीं अधिक श्रेष्ठ है, कहीं अधिक उच्च है। सत्यवादन वाणी की साधना तो है ही, मन, बुद्धि, अंतःकरण की साधना भी उसमें सम्मिलित है। इसलिए वाणी की साधना एक विशिष्ट साधना समझी जाती है। वह निश्चित ही सिद्धिदात्री होती है।

❑ ❑

वाणी का व्यभिचार रोका जाए

अपने मनोभाव, विचार, इच्छा, आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति से व्यक्त होते हैं। जब मनुष्य कुछ कहना चाहता है या अपने किन्हीं भावों को व्यक्त करना चाहता है तो उन्हें लिखकर, बोलकर ही व्यक्त करता है। जहाँ तक बोलने की बात है यह वक्ता और श्रोता के बीच विचार विनिमय का तात्कालिक किंतु अस्थायी माध्यम है। लिपि के माध्यम से कही गई बात अधिक समय तक स्थाई रहने वाली होती है।

प्रयोग चाहे किसी भी रूप में हो मनुष्य के विचार, भावों आदि की अभिव्यक्ति के लिए शब्द ही एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। मनुष्य ही नहीं इतर प्राणियों में भी अपनी भाषा, अपने शब्द होते हैं, जिनके माध्यम से वे परस्पर अपने भाव प्रकट करते हैं। एक बंदर किसी विपत्ति में हो तो वह इस तरह चिल्लाती है कि उसे सुनकर दूसरे बंदर एकत्र हो जाते हैं। इसी तरह चिड़िया, कुत्ते, बिल्ली आदि प्राणी भी अपने विशेष शब्दों के माध्यम से अपने मनोभाव को व्यक्त करते हैं। इतना अवश्य है कि पशुओं की वाणी का दायरा सीमित और परंपरागत ही रहता है जबकि मनुष्य ने अपने बुद्धिबल से भाषा के महत्त्वपूर्ण विज्ञान को जन्म दिया है।

शब्द वाणी मनुष्य के लिए ज्ञान का द्वार खोल देती है। भर्तृहरि ने लिखा है, "संसार में शब्द बिना ज्ञान प्राप्ति संभव नहीं।" बिना सुने-पढ़े, ज्ञान-प्राप्ति असंभव है। वृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है। "गर्वेषां बागेबायतनम्।" "वाक् ही ज्ञान का एकमात्र अधिष्ठान्न है।" "शब्द कामधेनुः" शब्द कामधेनु हैं जो मनुष्य के समक्ष अपार ज्ञानराशि का भंडार खोल देते हैं।

किंतु जिस तरह कल्प वृक्ष के नीचे बैठकर मनुष्य महान् ऐश्वर्य का अधिकारी भी बन सकता है तो दुष्कल्पनाओं के द्वारा विनाश को भी प्राप्त हो सकता है, उसी तरह शब्द भी अपने अच्छे या बुरे परिणाम उपस्थित करता है। मनुष्य जो कुछ बोलता है उसका अच्छा या बुरा प्रभाव समाज पर पड़ता है और तद्नुकूल ही बोलने वाले को परिणाम प्राप्त होते हैं। जिस तरह मनुष्य के अच्छे कार्यकलाप दूसरों को सुख देते हैं और उससे स्वयं को संतुष्ट करते हैं, बुरे कार्यों से दूसरों का अहित होता है स्वयं के जीवन में भी अशांति का कारण बनते हैं, उसी तरह अच्छे या बुरे शब्द भी परिणाम पैदा करते हैं।

मनुष्य की वाणी अमृत भी है और विष भी। औषधि भी है और विष वाण भी। शब्दों का सदुपयोग करके अपना और समाज का बहुत बड़ा हित-साधन किया जा सकता है तो दुरुपयोग करके दूसरों को क्लेश-हानि पहुँचाई जा सकती और अपना हित भी किया जाता है।

वाणी का दुरुपयोग मनुष्य को जीवन के सभी पहलुओं में असफल बनाता है। झूँठ बोलकर धोखा देकर चालाकी भरे शब्दों का

व्यवहार करके मनुष्य दूसरों को विश्वास रहित बना देता है। ऐसे व्यक्तियों का कोई साथ नहीं देता। धूर्त, चालाक, लंपट, बाचाल व्यक्तियों से सभी बचने का प्रयत्न करते हैं।

खेद का विषय है कि आज के युग में भाषा विज्ञान का जितना विकास हुआ है, वाणी को प्रभावशाली वैज्ञानिक रूप देने में जितना अन्वेषण हुआ है उतना ही वाणी का व्यभिचार बढ़ गया है। आजकल शब्द-ज्ञान के स्रोत न रहकर वाणी-विलास, तथाकथित वाकचातुरी या छल, दूसरों को उल्लू बनाते जा रहे हैं। सत्य को झूठे और झूठे को सत्य बनाने के लिए किया जाने वाला शब्दों का जोड़ वाणी व्यभिचार नहीं तो क्या है ? परस्पर बात-चीत, संवाद, लेखन आदि में शब्दों का होने वाला दुरुपयोग आज कम नहीं है।

अखबारों में दिए जाने वाले झूठे सनसनीखेज समाचार, भद्दी और दुष्प्रवृत्तियों को भड़काने वाली आकर्षक विज्ञापनबाजी, अश्लील साहित्य ने लिपि में शब्दों की दुर्दशा की है, तो परस्पर बोल-चाल में बरती जाने वाली चालाकी, वाक्-चातुरी, झूठ, छल, फरेब आदि ने संभाषण में। तात्पर्य यह है कि हर दिशा में वाणी व्यभिचार, शब्दों का दुरुपयोग काफी बढ़ गया है। शब्द जो मनुष्य के ज्ञानवर्धन और उसे प्रेरणा देने का महत्त्वपूर्ण साधन है वह दुरुपयोग करने पर विषतुल्य बन जाता है। विभिन्न रूपों में होने वाला शब्दों में दुरुपयोग आज हमारा कुछ कम अहित नहीं कर रहा। विश्वास ही नहीं होता किसी के कहे या लिखे पर। इसमें कोई संदेह नहीं कि दुष्ट-दुराचारी व्यक्ति भी अपनी वाक् चातुरी से अपने को भला सिद्ध कर सकता है। कोई बदमाश लोग शब्दचातुरी के द्वारा चकमा देते हैं कि अच्छों-अच्छों को भी धोखा खा जाना पड़ता है।

लोग बिना सोचे-विचारे वृत्तियों की उत्तेजनावश चाहे कुछ बोल जाते हैं। किसी बात पर तनिक ताव आया कि दूसरों को गाली-गलौज, उल्टा-सीधा करना शुरू किया। ऐसी स्थिति में बात-चीत का उद्देश्य-अर्थ आवश्यकता को न समझकर मन चाहे बकते जाना भी वाणी व्यभिचार ही है। फ्रेंकलिंन ने कहा है, "पैर फिसलने की गलती को ठीक किया जा सकता है जवान फिसल जाने पर उसे ठीक करना संभव नहीं होता।" पता नहीं दिन भर में हमारी जवान कितनी बार फिसलती है, कभी इसका हमने अध्ययन किया है ?

अपनी ही बात को सब कुछ मान उसे सर्वसम्मत मान लेना वाणी का दुरुपयोग है। इसी तरह व्यवहार में अति चतुरता का होना शब्दों को निर्जीव बना देता है। ऐसी चतुराई से दूसरों के हृदय में अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है और श्रद्धा के अभाव में शब्दों का कोई महत्त्व नहीं होता।

इस तरह हम क्षण-क्षण, बोलकर, लिखकर तरह-तरह से शब्दों का दुरुपयोग करते हैं और वाणी के महत्त्व शक्ति को क्षीण करते हैं। तथाकथित वाणी व्यभिचार से हम अपना और समाज का इतना बड़ा अहित करते हैं कि बुरे कार्य करने पर भी इतना न हो। किसी भी रूप में शब्दों के इस दुरुपयोग वाणी के व्यभिचार को रोका जाना चाहिए। बोलचाल में, लिखने पढ़ने में, व्यवहार में जीवन के सभी क्षेत्रों में वाणी देवी को जनहितकारिणी ज्ञानदायिनी, परस्पर सुख पहुँचाने वाली मानकर सच्चाई के आसन पर प्रतिष्ठित करना होगा, तब सचमुच वह हमारे लिए कामधेनु ही सिद्ध हो सकेगी।

❑ ❑

वार्तालाप में शालीनता का समावेश रहे

एक महापुरुष का कथन है—"मुझे बोलने दो, मैं विश्व को विजय कर लूँगा।' सचमुच वाणी से अधिक कारगर हथियार और कोई इस दुनियाँ में नहीं है। जिस आदमी में ठीक तरह उचित रीति से बातचीत करने की क्षमता है समझिये कि उसके पास मूल्यवान खजाना है। दूसरों पर प्रभाव डालने का प्रधान साधन वाणी है। व्यवहार, आचरण, विद्वता, योग्यता आदि का प्रभाव डालने के लिए समय की, अवसर की, क्रियात्मक प्रयत्न की आवश्यकता होती है पर वार्तालाप एक ऐसा उपाय है जिसके द्वारा बहुत ही स्वल्प में दूसरों को प्रभावित किया जा सकता है।

बातचीत करने की कला में जो निपुण है वह असाधारण संपत्तिवान है। योग्यता का परिचय वाणी के द्वारा प्राप्त होता है। जिस व्यक्ति का विशेष परिचय मालूम नहीं है उससे कुछ देर बातचीत करने के उपरांत

जाना जा सकता है कि वह कैसे विचार रखता है, कितना योग्य है, कितना ज्ञान और अनुभव रखता है। दूसरों पर अपनी योग्यता प्रकट करता है ऐसे प्रमुख माध्यम को बहुत ही सावधानी के साथ बरता जाना चाहिए। कई ऐसे सुयोग्य व्यक्तियों को हम जानते हैं जो परीक्षा करने पर उत्तम कोटि का मस्तिष्क, उच्च हृदय और दृढ़ चरित्र वाले साबित होंगे परंतु उनमें बातचीत करने का शऊर न होने के कारण सर्वसाधारण में मूर्ख समझे जाते हैं और उपेक्षणीय दृष्टि से देखे जाते हैं। उनकी योग्यताओं को जानते हुए भी लोग उनसे कुछ लाभ उठाने की इच्छा नहीं करते। कारण यह कि बातचीत के छिछोरापन से लोग झुँझला जाते हैं और उनसे दूर-दूर बचते रहते हैं।

अनेक व्यक्ति ऐसे भी पाए जाते हैं जो इतने योग्य नहीं होते जितना कि सब लोग समझते हैं। वाणी की कुशलता के द्वारा वे लोग दूसरों के मन पर अपनी ऐसी छाप बिठाते हैं कि सुनने वाले मुग्ध हो जाते हैं। कई बार योग्यता रखने वाले लोग असफल रह जाते हैं और छोटी कोटि के लोग सफल हो जाते हैं। प्रकट करने के साधन ठीक हों तो कम योग्यता को ही भली प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है और उसके द्वारा बहुत काम निकाला जा सकता है। विद्युत् विज्ञान के आचार्य जे० बी० राड का कथन है कि उत्पादन केंद्र में जितनी बिजली उत्पन्न होती है उसका दो तिहाई भाग बिना उपयोग के ही बर्बाद हो जाता है, पावर हाउस में उत्पन्न हुई बिजली का एक तिहाई भाग ही काम में आता है। वे कहते हैं कि अभी तक जो यंत्र बने हैं वे अधूरे हैं इसलिए आगे ऐसे यंत्रों का आविष्कार होना चाहिए जो उत्पादित बिजली को बर्बाद न होने दें, जिस दिन इस प्रकार के यंत्र तैयार हो जाएँगे तब बिजली घरों की शक्ति तिगुनी बढ़ जाएगी, खर्च तिहाई रह जाएगा।

करीब-करीब ऐसी ही बर्बादी मानवीय योग्यताओं की होती है। अधूरे विद्युत यंत्रों के कारण दो तिहाई बिजली नष्ट हो जाती है, बातचीत की कला से अनभिज्ञ होने के कारण दो तिहाई से भी अधिक योग्यताएँ निकम्मी पड़ी रहती है। यदि इस विद्या की जानकारी हो तो तिगुना कार्य संपादन किया जा सकता है। जितनी सफलता आप प्राप्त करते हैं उतनी तो तिहाई योग्यता रखने वाला भी प्राप्त कर सकता है। आप अपनी शक्तियाँ बढ़ाने के लिए घोर परिश्रम करें किंतु उनसे लाभ उठाने में असमर्थ रहें तो वह उपार्जन

किस काम का ? उचित यह है कि जितना कुछ पास में है उसका ठीक ढंग से उपयोग किया जाए। जिन्हें मूर्ख कहा जाता है या मूर्ख समझा जाता है वास्तव में वे उतने अयोग्य नहीं जितना कि ख्याल किया जाता है उनमें भी बहुत अंशों तक बुद्धिमत्ता होती है, किंतु जिस अभाव के कारण उन्हें अपमानित होना पड़ता है वह अभाव है बातचीत की कला से परिचित न होना।

मनोगत भावों को भली प्रकार, उचित रीति से प्रकट कर सकने की योग्यता एक ऐसा आवश्यक गुण है जिसके बिना जीवन विकास में भारी बाधा उपस्थित होती है। आपके मन में क्या विचार हैं, क्या इच्छा करते, क्या सम्मति रखते हैं जब तक यह प्रकट न हो तब तक किसी को क्या पता चलेगा ? मन ही मन कुड़कुड़ाने से, दूसरों के संबंध में बुरी-बुरी कल्पनाएँ करने से कुछ फायदा नहीं, आपको जो कठिनाई है, जो शिकायत है, जो संदेह है उसे स्पष्ट रूप से कह दीजिए, जो सुधार या परिवर्तन चाहते हैं उसे भी प्रकट कर दीजिए इस प्रकार अपनी विचारधारा को जब दूसरों के सामने रखेंगे और अपने कथन का औचित्य साबित करेंगे तो मनोनुकूल सुधार हो जाने की बहुत कुछ आशा है।

भ्रम का, गलतफहमी का सबसे बड़ा कारण यह है कि झूँठे संकोच और झिझक के कारण लोग अपने भावों को प्रकट नहीं करते, इसलिए दूसरा यह समझता है कि आपको कोई कठिनाई या असुविधा नहीं है, जब तक कहा न जाए तब तक दूसरा व्यक्ति कैसे जान ले कि आप क्या सोचते हैं और क्या चाहते हैं ? अप्रत्यक्ष रूप से, सांकेतिक भाषा में, विचारों का जाहिर करना केवल भावुक और संवेदनशील लोगों पर प्रभाव डालता है, साधारण कोटि के हृदय पर उसका बहुत ही कम असर होता है, अपनी निजी गुत्थियों में उलझे रहने के कारण दूसरों की सांकेतिक भाषा को समझने में वे या तो समर्थ नहीं होते या फिर थोड़ा ध्यान देकर फिर उसे भूल जाते हैं। अक्सर बहुत जरुरी कामों की ओर पहले ध्यान दिया जाता है और कम जरुरी कामों को पीछे के लिए डाल दिया जाता है। संभव है आपकी कठिनाई या इच्छा को कम जरुरी समझकर पीछे डाल दिया जाता हो फिर के लिए टाला जाता हो, यदि सांकेतिक भाषा में मनोभाव प्रकट करने से काम चलता न दिखाई पड़े तो अपनी बात

को स्पष्ट रूप से नम्र भाषा में कह दीजिए, उसे भीतर ही भीतर दबाए रहकर अपने को अधिक कठिनाई में मत डालते जाइए।

संकोच उन बातों के कहने में होता है जिनमें दूसरों की कुछ हानि की, अपने को किसी लाभ की संभावना होती है। ऐसे प्रस्ताव को रखते हुए झिझक इसलिए होती है कि अपनी उदारता, सहनशीलता को धब्बा लगेगा, नेकनीयती पर आक्षेप किया जाएगा या क्रोध का भाजन बनना पड़ेगा। यदि आपका पक्ष उचित, सच्चा या न्यायपूर्ण है तो इन कारणों से झिझकने की कोई आवश्यकता नहीं है, हाँ अनीतियुक्त बात कर रहे हों तो बात दूसरी है। यदि अनुचित या अन्याययुक्त आपकी माँग नहीं है तो अधिकारों की रक्षा के लिए निर्भयतापूर्वक अपनी मांग को प्रकट करना चाहिए। हर मनुष्य का पुनीत कर्त्तव्य है कि मानवता के अधिकारों को प्राप्त करे और रक्षा करे। केवल व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं वरन् इसलिए भी कि अपहरण और कायरता इन दोनों घातक तत्त्वों का अंत हो।

दबंग रीति से, निर्भयतापूर्वक, खुले मस्तिष्क से बोलने का अभ्यास करिए। सच्ची और खरी बात कहने की आदत डालिए। जहाँ बोलने की जरूरत है वहाँ अनावश्यक चुप्पी मत साधिये, ईश्वर ने वाणी का पुनीत दान इसलिए दिया है कि अपने मनोभावों को भली प्रकार प्रकट करें, भूले हुओं को समझाएँ, भ्रम का निवारण करें और अधिकारों की रक्षा करें। आप झेंपा मत कीजिये, अपने को हीन समझने या मुँह खोलते हुए डरने की कोई बात नहीं है। धीरे-धीरे गंभीरतापूर्वक, मुस्कराते हुए, स्पष्ट स्वर में सद्भावना के साथ बातें किया करिए, इससे आपकी योग्यता बढ़ेगी, दूसरों को प्रभावित करने में सफलता का मार्ग प्रशस्त होता जाएगा।

ज्यादा बकबक करने की कोशिश मत कीजिये, अनावश्यक, अप्रासंगिक, अरुचिकर बातें करना, अपनी के आगे किसी की सुनना ही नहीं, हर घड़ी चबर-चबर जीभ चलाते रहना, बेमौके बेसुरा राग अलापना, अपनी योग्यता से बाहर की बातें करना, शेखी बघारने वालों के दुर्गुण हैं, ऐसे लोगों को मूर्ख, मुहफट और असभ्य समझा जाता है ऐसा न हो कि अधिक वाचालता के कारण आप इसी श्रेणी में पहुँच जाएँ। तीक्ष्ण दृष्टि से परीक्षण करते रहा कीजिए कि आप

की बात को अधिक दिलचस्पी के साथ सुना जाता है या नहीं, सुनने में लोग ऊबते तो नहीं, उपेक्षा तो नहीं करते। यदि ऐसा हो तो वार्तालाप की त्रुटियों को ढूँढिए और उन्हें सुधारने का उद्योग कीजिए अन्यथा बक्की-झक्की समझकर लोग आप से दूर भागने लगेंगे।

अपने लिए या दूसरे के लिए जिसमें कुछ हित साधन होता है, ऐसी बात करिए। किसी उद्देश्य को लेकर प्रयोजन युक्त भाषण कीजिए अन्यथा चुप रहिए। कड़ुई हानिकारक, दुष्ट भावों को भड़काने वाली भ्रम पूर्ण बातें मत कहिए। मधुर, नम्र, विनययुक्त, उचित और सद्भावनायुक्त बातें करिए जिससे दूसरों पर अच्छा प्रभाव पड़े, उन्हें प्रोत्साहन मिले, ज्ञान वृद्धि हो, शांति मिले तथा सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा हो। ऐसा वार्तालाप एक प्रकार का वाणी का तप है, मौन वृत का अर्थ चुप रहना नहीं वरन् उत्तम बातें करना है। आप वाणी यज्ञ में प्रवृत्त हूजिए, मधुर और हितकर भाषण करने की ओर अग्रसर होते रहिये।

किस आदमी से क्या बात करनी चाहिए ? यह सबसे पहले जानने की बात है। अपनी निजी समस्याओं के बारे में सुनने, समझने, विचार करने के लिए हर मनुष्य के पास पर्याप्त काम पड़ा हुआ है, उसे अपनी निजी समस्याएँ ही बहुत अधिक मात्रा में सुलझानी हैं, किसी को इतनी फुरसत नहीं है कि आवश्यक बातों को सुने, समझे, सिर खपावे। यदि आप चाहते हैं कि कोई व्यक्ति आपकी बात सुने तो पहले उसकी निजी समस्याओं और दिलचस्पी का विषय जानिए और उसी के संबंध में वार्तालाप आरंभ कीजिए। यदि केवल मनोरंजन के लिए समय निकालने के लिए बातें करनी हैं तो उसकी निजी आवश्यकताओं के बारे में, निजी सफलताओं के बारे में, निजी कठिनाइयों के बारे में शुरुआत कीजिए। मनुष्य चाहता है कि हमारे ऊपर जो कष्ट है, जिन कठिनाइयों का मुकाबिला कर रहे हैं उनके लिए कोई सहानुभूति प्रकट करे, जो सफलताएँ हमने प्राप्त की हैं, उनके लिए कोई प्रशंसा करे, जो काम हम करते हैं उसके महत्त्व का वर्णन करे, जिस जानकारी की आवश्यकता है उसे बतावे, जिस विषय में दिलचस्पी रखते हैं उसे सुनाकर तृप्त करे।

आप किसी को ठगने या कुमार्ग पर ले जाने के लिए अपनी पुनीत वाणी का उपयोग कदापि न कीजिए, शारदा माता का इस

प्रकार दुरुपयोग करेंगे तो अंत में बहुत ही दुःखदाई परिणाम उपस्थित होगा। आप अपना दृष्टिकोण ऊँचा रखिए, ऊँचे और भले उद्देश्यों के लिए बातचीत कीजिए, परंतु स्मरण रखिए वही वार्तालाप सफल हो सकता है जिसमें सुनने वाला दिलचस्पी लेता है। यदि आपकी बातों में उसे अपने काम की कोई बात प्रतीत न होगी तो वह अरुचि पूर्वक कुछ देर सुन भले ही ले पर उससे प्रभावित जरा भी न होगा। ऐसे ओछे और एकांगी प्रसंगों से कोई सार नहीं निकलता, कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। बेकार की दांता किट-किट करने का शौक हो तब तो बात अलग है अन्यथा यदि कुछ लाभ की कम से कम मैत्री वृद्धि की आशा से वाणी विनिमय करना चाहते हैं तो इसका ध्यान रखिए कि आरंभ दूसरे की दिलचस्पी के विषय को लेकर किया जाए।

बचे हुए समय को लोग गपशप में गुजारते हैं। अक्सर इस गपशप का विषय अश्लील या वीभत्स होता है। या तो गंदी, फौश, कामुकता पूर्ण बातों से मनोविनोद किया जाता है या फिर किसी की बुराई कराई का अवसर ढूँढा जाता है। यदि कुछ ठीक आधार न मिले तो भी अश्लीलता या निंदा के मन गढंत अवतरण तैयार कर लेते हैं। मित्र मंडलियाँ अपना बहुमूल्य समय इस प्रकार निकृष्ट कोटि के आधार पर मनोविनोद करती हैं। समय संपत्ति है, उसका इस प्रकार दुरुपयोग न होना चाहिए, मनोरंजन के लिए यात्रा के अनुभव, कौतूहल पूर्ण घटनाएँ, अद्‌भुत वृत्तांत, रहस्योद्‌घाटन, आदि का सहारा लिया जा सकता है जिससे जानकारी एवं चतुरता में वृद्धि हो तथा नीच निंदित वृत्तियों का उभार न हो।

यह युग बहस का है। बहस से सरकारें चलाई जाती हैं, अदालतों में बहस ही प्रधान है, सभा संस्थाओं में बहस के उपरांत कुछ निर्णय होता है। प्रजातंत्र, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, स्वेच्छा सहयोग, विचार परिवर्तन एवं अधिक उचित निर्णय पर पहुँचने का एक मात्र आधार बहस है, जिस कार्य में बहुत लोगों का समावेश है उनके बिखरे विचारों को एक स्थान पर केंद्रीभूत करने की यही एक प्रणाली है। इस युग में राज-काज से लेकर घर गृहस्थी की व्यवस्था का संचालन बहस के आधार पर होता है या होने की अपेक्षा रखता है।

बहस के लिए जिस धैर्य की आवश्यकता है हम लोगों में उसका बहुत ही अभाव होता है। किसी सार्वजनिक विषय पर बातचीत करते निजी प्रसंग आ जाता है और बात का बतंगड़ बनकर लड़ाई झगड़े का वैमनस्य का मारपीट का अवसर आ जाता है। बहुत थोड़ी देर सहिष्णुता के साथ बहस चलती है इसके बाद आपस में एक दूसरे के ऊपर आक्षेप होने लगते हैं, व्यक्तिगत बुराई करने लगते हैं, जिस प्रसंग पर वार्तालाप चल रहा था वह अधूरा छूट जाता है और उसके स्थान पर आपसी छिद्रान्वेषण शुरू हो जाता है। यह दिमागी कमजोरी, असहिष्णुता कल्पना शक्ति की कमी है इसे जितनी जल्दी हो दूर करना चाहिए। बहस करना सत्य की शोध करने के लिए बहुत ही आवश्यक है। यदि आप सत्य के पुजारी हैं और उचित नतीजे पर पहुँचने की इच्छा करते हैं तो बहस करने की कला का अभ्यास कीजिए।

कोई व्यक्ति छोटी उम्र का है या कम जानकारी रखता है तो उसे यह सोचकर चुप न रह जाना चाहिए कि बड़ों के सामने किस प्रकार मुँह खोलूँ इसमें उनका अपमान होगा या पूछने से मुझे मूर्ख अयोग्य समझा जाएगा अथवा नेक नीयती पर कोई अविश्वास करेगा। हर मनुष्य को अपनी सम्मति प्रकट करते समय यह इतमीनान रखना चाहिए कि मेरी सम्मति को अच्छी नीयत से प्रकट किया हुआ समझा जाएगा, कोई उलटा अर्थ न लगाया जाएगा। जब तक यह विश्वास नहीं होता तब तक मत प्रकट करने में झिझक होती है। ऐसी झिझक अनावश्यक है उसे दूर कर देना चाहिए और जो कुछ कहना है साफ-साफ स्पष्ट स्वर में, मध्यम आवाज से निर्भीकतापूर्वक कह देना चाहिए। यदि आप ठीक अवसर पर तो झेंपके मारे कुछ कहते नहीं और पीछे पीछे उस निर्णय की बुराई करते हैं तो वह उचित नहीं, आप में इतना साहस होना चाहिए कि ठीक अवसर पर अपनी बात को धैर्य पूर्वक रख सकें और दूसरों को उससे प्रभावित कर सकें।

ऐसा मत मान बैठिए कि सबसे बड़ा बुद्धिमान मैं भी हूँ। मूर्ख लोग दुनियाँ में डेढ़ अकल समझते हैं उनका ख्याल होता है कि ईश्वर ने एक अकल हमें दी है और शेष आधी सारी दुनियाँ के हिस्से में आई है। इस प्रकार की मान्यता बड़ी ही भयंकर है और लाभदायक निर्णय तक पहुँचने में भारी बाधा उपस्थित करती है। आप अकेले ही इस संसार में बुद्धिमान नहीं हैं, और लोग भी हैं। संभव है किसी विषय में आप गलती पर हों

और दूसरों की राय ठीक हो। इसलिए स्थिति की गहराई तक पहुँचने का प्रयत्न करिए, दूसरों के विचार अधिक ठोस हैं और उनके पीछे अधिक प्रामाणिकता है तो उन्हें स्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए। अपनी भूलों को तलाश करने और उन्हें सुधारने के लिए विद्यार्थी की भाँति, जिज्ञासु की तरह मन को खुला रखिए। हठधर्मी से अपनी ही बात पर अड़े रहना अनुचित है इससे कोई अच्छा परिणाम नहीं निकलता। दूसरों की निगाह में आप घृणास्पद जिद्दी ठहरते हैं और स्वयं उचित निर्णय तक पहुँचने से, सत्य की शोध करने से वंचित रह जाते हैं।

दूसरे जो विचार प्रकट कर रहे हैं उनकी नेक नीयती पर विश्वास कीजिए। यदि उनमें बदनीयती छिपी हुई दिखाई पड़े तो भी उनकी दलील पर उसी ढंग से विवेचना कीजिए जैसे कि नेक नीयती से कही हुई बात पर की जाती है। तुनक मिजाजी, बिगड़ना, बात-बात में अपमान ख्याल करना उचित नहीं, इससे बहस की गंभीरता नष्ट हो जाती है। दूसरों की बातचीत का ढंग कुछ अपमान जनक दोषपूर्ण हो तो भी उसके बाह्य रूप पर ध्यान न देकर उसके तथ्य पर विचार करना चाहिए, सहानुभूतिपूर्ण रवैया रखने से अयोग्य व्यक्तियों के बीच में भी बहस जारी रखी जा सकती है और किसी ठीक निर्णय पर पहुँचा जा सकता है। सैद्धांतिक बहस में व्यक्तिगत प्रसंगों को भूलकर भी न आने देना चाहिए अन्यथा बहस का उद्देश्य नष्ट हो जाएगा और व्यर्थ कर्कशता उठ खड़ी होगी।

आप खुद ही मत कहते जाइए, दूसरों को भी कहने दीजिए। बीच में बात मत काटिए वरन् पूरी बात सुनने तक ठहरे रहिए। दूसरा किसी प्रसंग को कह रहा है तो उसे पूरा कह लेने दीजिए, 'इसे तो हम जानते हैं, 'यह तो हमें पहले ही मालूम है, ऐसा कहने से कहने वाले का तथा दूसरे सुनने वालों का मजा बिगड़ जाता है। अपने विचारों का विरोध होते देख धैर्य खोना उचित नहीं, यह कोई लाजमीं बात नहीं है कि आपके विचार ठीक ही हों और उनके विरुद्ध मत रखने का किसी को अधिकार ही न हो। विरोधी पर बिगड़ मत खड़े होइये वरन् धैर्य पूर्वक बात सुनिए और शांति के साथ तर्क और प्रमाणों द्वारा प्रत्युत्तर देकर पुनः अपनी बात की पुष्टि कीजिए।

जो बात आपको मालूम नहीं है, उसको गलत-सलत मत कहिए वरन् प्रश्नकर्त्ता को अन्य जानकार व्यक्तियों या पुस्तकों की सहायता लेने के लिए कहिए। असमंजस में पड़ने या शरमाने की कोई बात नहीं है। कोई व्यक्ति पूर्ण ज्ञाता होने का दावा नहीं कर सकता। जो बात मालूम नहीं है उसके बारे में स्पष्ट कह देना उचित है, जिससे दूसरों को धोखा न हो और वस्तु स्थिति मालूम होने पर झूठा या बहाने बाज न बनना पड़े।

कई लोग प्रश्न से बहुत घबराते हैं, उन्हें लगता है मानो कोई हमारे ऊपर आक्रमण कर रहा है, कुछ इल्जाम लगा रहा है, कोई भेद मालूम कर रहा है, या कुछ छीन रहा है। साधारण-सी बात के उत्तर में वे आपे से बाहर हो जाते हैं और अंट-संट बातें कहने लगते हैं। यह सशंकित, अविश्वास और अनुदार हृदय का लक्षण है। आप उत्तर देने में बहुत उदार रहिए। जानकारी की इच्छा से, पूछे गये प्रश्नों का नेकनीयती से उत्तर दिया जाए तो प्रश्नकर्त्ता का यदि कोई अनुचित उद्देश्य रहा हो तो वह भी बदल जाता है। किसी की जानकारी बढ़ाना उसके साथ में एक प्रकार का उपकार करना है। उपकारी के प्रति कुछ न कुछ कृतज्ञता का भाव होता है। जिसके द्वारा दुर्भाग्य की किसी न किसी अंश में सफाई होती ही है। प्रश्न का उत्तर प्रश्न में देना बेहूदापन है। कोई पूछता है कि लकड़ी की दुकान कहाँ है ? आप उत्तर देते हैं—मैं कोई लकड़हारा हूँ ? कोई पूछता है—अमुक व्यक्ति कहाँ मिलेगा ? आप उत्तर देते हैं—मैं कोई उसका नौकर हूँ ?" ऐसे उत्तर अनुदारता और घमंडीपन प्रकट करते हैं। सरलता से 'हाँ' या 'ना' में उत्तर दिया जा सकता है। पूछे गए प्रश्न के बारे में जितना जानते हैं उतना बता दीजिए अन्यथा कह दीजिए—मुझे मालूम नहीं सरलता और मधुरता से जो बात कही जा सकती है उसके लिए प्रश्न वाचक उत्तर देकर कटुता उत्पन्न करने में कुछ अच्छाई थोड़े ही है।

अपरिचित व्यक्ति से वार्तालाप आरंभ करते हुए प्रश्नों की झड़ी लगा देना अनुचित है। आपका क्या नाम है। कहाँ रहते हैं ? कौन जात है ? क्या पेशा करते ? कहाँ से आए हैं ? कहाँ जा रहे हैं ? यह बातें अपरिचित होने की दशा में अचानक पूछना, सभ्यता के विरुद्ध है। इसमें उत्तर देने वाले को बुरा लग सकता है, वह उपेक्षा कर सकता है। या अंट-संट उत्तर दे सकता है। जब तक किसी के

स्वभाव के बारे में कुछ जानकारी न हो तब तक अदालत जैसे गवाह पर प्रश्नों की झड़ी लगा देती है। वैसा व्यवहार करना उचित नहीं। यदि किसी का परिचय प्राप्त करना है या स्तब्धता भंग करके वार्तालाप का सिलसिला चलाना है तो किसी आम प्रसंग को लेकर शुरू करना चाहिए। वर्तमान मौसम, फसल, व्यापार, तात्कालिक परिस्थिति कोई अखबारी खबर, सामने का कोई दृश्य आदि का आधार लेकर बात-चीत आरंभ की जा सकती है और फिर स्वभाव संबंधी जानकारी होने पर निजी पूछताछ तक बढ़ा जा सकता है।

कौन आदमी इस समय किस मनोदशा में है। इसको भाँप कर जो आदमी तदनुसार वार्तालाप की तैयारी करते हैं वे अपना प्रयोजन सिद्ध करने में बहुत कुछ सफल होते हैं। अफसरों से मुलाकात करके काम निकालने वाले लोग पहले अर्दली से यह मालूम कर लेते हैं कि इस समय साहब का 'मिजाज' कैसा है। यदि मिजाज अनुकूल देखते हैं तो प्रयोजन प्रकट करते हैं अन्यथा किसी दूसरे अवसर की प्रतीक्षा तक अपनी बात को स्थगित रखते हैं। यह बात बड़े आदमियों या अफसरों के बारे में ही नहीं है वरन् सर्वसाधारण के बारे में भी है। निजी कारणों से जब मनुष्य का चित्त ढांचा डोल रहा हो, शोक, चिंता, क्रोध या बेचैनी में निमग्न हो तो उस समय कोई अप्रिय, भारी या उसकी दृष्टि में अनावश्यक जँचने वाले प्रस्ताव न रखने चाहिए क्योंकि डावांडोल मनोदशा के कारण यह आपकी बात को न तो ठीक तरह समझ सकेगा और न उस पर उचित फैसला कर सकेगा ऐसी दशा में प्रयास विफल ही रहेगा। यदि उसी दशा में अपनी बात कहना आवश्यक हो तो पहले उसकी विषम मनोस्थिति के प्रति सहानुभूति प्रकट कीजिए और कहिए कि ऐसे अवसर पर इच्छा न रहते हुए भी कहने की मजबूरी प्रकट करने के उपरांत अपनी बात को कहिए। इस प्रकार उसके डावांडोल स्वभाव के बारे में जब आप परोक्ष रूप से सावधान करा देते हैं तो वह सजग हो जाता है और अपनी मनःस्थिति पर काबू रखकर आपकी बात को सुनता समझता है। ऐसी दशा में किसी अच्छे परिणाम की आशा की जा सकती है।

अपनी निजी बातें हर किसी के सामने प्रकट मत करिये। जिनके कहने से अपनी मूर्खता, गलती, गुप्त जानकारी का पता चलता हो वह बातें केवल निजी और विश्वसनीय मित्रों से ही करने योग्य हैं। अनाधिकारी और साधारण परिचय वाले व्यक्ति तक वे बातें

पहुँचें तो अपनी महत्ता घटाती हैं, लघुता प्रकट करती हैं। आप अधिक कष्ट में हैं, अपमानित हुए हैं, घरेलू अनिष्टों से ग्रसित हैं, रुग्ण हैं, चिंतित हैं, तो उन बातों को उनके सामने न कहिए जो निवारण तो कर नहीं सकते वरन् मजाक बनाते हैं। जिस प्रकार गड़े धन को प्रसिद्ध कर देना ठीक नहीं उसी प्रकार भावी योजनाओं को, गुप्त रहस्यों को, न कहने योग्य बातों को भी छिपाकर रखना चाहिए। जिसके पेट में बात नहीं पचती उसे पोले बाँस का छछोरा समझकर गंभीर वार्तालाप में कोई उसे शामिल नहीं करता।

किसी कार्यव्यस्त आदमी से भेंट करनी हो तो अपने प्रयोजन को संक्षेप में कह दीजिए, और उसी मर्यादा में बहस करके थोड़े समय में किसी निष्कर्ष पर पहुँच जाइए। संसार के कार्य व्यस्त महापुरुषों का समय बहुत मूल्यवान होता है वे मुलाकात करने वालों को कुछ मिनटें ही दे सकते हैं। यदि सिलसिले से आवश्यक बातों को न करके, बीच में अप्रासंगिक और बेतरतीब बातें की जाएँ तो समय की बहुत बर्बादी होती है। समय निरर्थक बातों में चला जाता है और आवश्यक बातें अधूरी छूट जाती हैं। इसलिए कार्य व्यस्त आदमियों के पास मिलने जाएँ तो जो बातें कहनी हैं उनको क्रम बद्ध एक छोटे कागज पर नोट कर लीजिए और उन्हें उचित विस्तार के साथ जहाँ तक संभव हो संक्षेप में कह दीजिए ऐसा करने से उनका बहुमूल्य समय व्यर्थ नष्ट न होगा और आपको भी अधिक देर न लगानी पड़ेगी। समय बचाने का सदैव ध्यान रखिए क्योंकि समय ही संपत्ति है। यदि आपके पास फालतू वक्त है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि दूसरों के पास भी वैसी ही फुरसत है। आप ठलुए हैं, तो दूसरों को ठलुआ मत समझिए। दूसरों का खासकर कार्य व्यस्त लोगों का कम से कम समय बर्बाद कीजिए, उनका उतना ही समय लीजिए जितने में वे अनखने न लगें, उठ जाने के संकेत न करने लगें। पत्र व्यवहार में भी ऐसा ही कीजिए, बहुत लंबी, बेकार की बातों से भरी हुई चिट्ठियाँ उन लोगों को मत लिखिए जिनके पास बहुत काम रहता है। संक्षेप में प्रयोजन प्रकट करना, यही लाभदायक तरीका है अन्यथा बेकार के खर्रे बिना पढे मुद्दतों पड़े रहेंगे और उनका उत्तर न मिलने या विलंब से मिलने की अधिक संभावना रहेगी।

मुस्कराकर, प्रसन्नता, प्रकट करते हुए, बातचीत करना एक बहुत ही आकर्षण ढंग है जिसके द्वारा सुनने वाले को अनायास ही आपकी

ओर खिंचाव होता है, जब आप मुस्कराते हुए आनंदित होकर अपना कथन आरंभ करते हैं तो उसके दो तात्पर्य निकलते हैं। पहला यह है कि आप मनस्वी हैं, दृढ़ निश्चयी हैं और सुलझे हुए विचारों के हैं। दूसरा यह कि सुनने वाले से मिलकर आप प्रसन्न हुए हैं, उसके प्रति प्रेम भाव रखते हैं। मुस्कराहट मन की दृढ़ स्थिति को सूचित करती है जिसके विचार संदिग्ध हैं, नाना प्रकार के भावों का उतार चढ़ाव चेहरे पर प्रदर्शित करता है उसे अविश्वास की दृष्टि से देखा जाता है। ऐसे आदमी के व्यक्तित्व की कोई अच्छी छाप दूसरे पर नहीं लगती। किंतु यदि प्रसन्नता चेहरे पर खेल रही है तो उसका तात्पर्य दृढ़ता, गंभीरता और पूर्णता है। उसे सुलझा हुआ सुस्थिर समझकर स्वभावतः विश्वास करने की इच्छा होती है। मुस्कराहट का दूसरा तात्पर्य है—सुनने वाले के आगमन से खुशी प्रकट होना, यह भी साधारण बात है। जहाँ उपेक्षा होती है वहाँ संबंध रखना लोग पसंद नहीं करते पर जहाँ प्रेम और सत्कार का भाव टपकता है वहाँ बार-बार जाने की इच्छा होती है। थोड़ी असुविधा उठाकर भी वहाँ पहुँचने का प्रयत्न किया जाता है क्योंकि वहाँ दुहरा लाभ है, साधारण काम तो पूरा होता ही है साथ में प्रेम और आदर की आत्मिक खुराक मुफ्त में मिल जाती है। प्रसन्नता के साथ वार्तालाप करने के दोनों ही पहलू एक से एक जोरदार हैं। विश्वासी आदमी से व्यवहार में धोखा होने का अंदेशा नहीं रहता उसकी मानसिक स्थिरता से अन्य लाभ प्राप्त होने की भी आशा रहती है अतएव उससे संबंध रखना वैसे भी लाभदायक ठहरता है।

आप जिन लोगों का संबंध अपने साथ अधिक समय तक रखना उचित समझते हैं उनसे मुस्कराकर बोला कीजिए, प्रसन्नता प्रकट करते हुए बात-चीत किया कीजिए। यह ऐसा बेपूँजी का व्यापार है जिसमें खर्च बिलकुल नहीं आमदनी बहुत है। जब आप थोड़ा हँसते हैं तो खिलते हुए पुष्प की भाँति अपनी सुगंधि चारों ओर बखेर देते हैं। उस सुगंध से दर्शक और श्रोताओं का मन लुभायमान हो जाता है। पुष्प में रूप और गंध है। मुस्कराहट में सौंदर्य और मिठास है। भौंरे और मधु मक्खियों का जमघट फूल पर रहता है। आपकी मुस्कराहट पर मुग्ध होकर संबंधियों का समूह पीछे-पीछे लगा फिरेगा।

आत्मीयता प्रकट करने का अच्छा तरीका यह है कि बराबर वालों का और छोटों का आदरपूर्वक नाम लेकर पुकारिए। नाम के पहले पंडित,

बाबू, लाला आदि विशेषण, पीछे शर्मा, वर्मा, गुप्ता आदि गोत्र सूचक पदवी लगाने से नाम आदरयुक्त हो जाता है, वार्तालाप के सिलसिले में बराबर वालों का नाम बीच-बीच में कई बार लिया कीजिए। इस तथ्य को समझ लीजिये कि "मनुष्य का नाम उसकी भाषा में उसके लिए सबसे मधुर और सबसे महत्त्वपूर्ण शब्द है।" अपना नाम लिए जाते सुनकर मन में एक गुदगुदी-सी उत्पन्न होती है, क्योंकि उसमें अपनेपन का भाव है आत्मीयता का सम्मिश्रण है, महाशय जी महानुभाव, श्रीमान जी आदि शब्द छूँछे और आडंबरमय हैं, इनसे अपनापन प्रकट नहीं होता, सुनने वाले को कोई विशेष आकर्षण नहीं दिखाई पड़ता किंतु आदरपूर्वक नाम लेकर पुकारने से सुनने वाले का हृदय हुलस आता है।

बड़ों को उनकी आरंभिक पदवी के साथ जी लगाकर पुकारा कीजिए जैसे पंडितजी, लालाजी, ठाकुर साहब आदि। यदि उनका कोई और विशेषण है जैसे—नंबरदार साहब, वैद्यजी, डाक्टर साहब, खजांची साहब, तो उसे कहिए। यदि अधिक निकट का परिचय है तो रिश्तेदारी सूचक संबोधनों का प्रयोग करिये जैसे—चाचाजी, बाबा साहब, भैयाजी, ताऊजी आदि। कुछ रिश्ते जो लघुता सूचक हैं उन्हें कहना उचित नहीं, जैसे—साला, भतीजा, भाभी, साली आदि। छोटों को बेटा, नाती कहकर नहीं पुकारना चाहिए, वरन् लल्लू, कुँवरसाहब जैसे प्रिय शब्दों को काम में लाना चाहिए। स्त्रियों को बेटी, बहिनजी या माताजी शब्द आमतौर पर काम में लाने चाहिए। खास रिश्ते की बात अलग है जिनसे दूर का रिश्ता है उन्हें इन्हीं तीन रिश्तों के अंतर्गत ले आना चाहिए।

इस प्रकार रिश्तेदारी पदवी मात्र नाम तथा आदरपूर्वक नाम लेकर लोगों को संबोधन किया करें तो आप निश्चय ही दूसरों पर अपनी आत्मीयता की छाप जमाने में समर्थ होंगे और बदले में उनकी आत्मीयता प्राप्त करेंगे। बोलने में यह बहुत मधुर साधन है कि दूसरे को यथोचित रीति से नाम के निजीपन के साथ पुकारा जाए। आप प्रेम संबंधों की वृद्धि करना चाहते हैं परायों को अपना बनाना चाहते हैं, घनिष्ठता बढ़ाना चाहते हैं, तो उनके कानों में रस टपकाइए। अपना नाम सबसे मधुर शब्द है, इस शब्द को एक से अधिक बार कहिए, संबोधन की आवश्यकता पड़ने पर उसी का उपयोग कीजिए।

❑ ❑

शिष्टाचार का एक महत्त्वपूर्ण अंग वाक्-संयम

सभ्यता और शिष्टाचार का पारस्परिक संबंध इतना घनिष्ठ है कि एक के बिना दूसरे को प्राप्त कर सकने का ख्याल निरर्थक है। जो सभ्य होगा वह अवश्य ही शिष्ट होगा और जो शिष्टाचार का पालन करता है उसे सब कोई सभ्य बतलाएँगे। ऐसा व्यक्ति सदैव ऐसी बातों से बचकर रहता है जिनसे किसी के मन को कष्ट पहुँचे या किसी प्रकार के अपमान का बोध हो। वह अपने से मतभेद रखने वाले और विरोध करने वालों के साथ भी कभी अपमानजनक भाषा का प्रयोग नहीं करता। वह अपने विचारों को नम्रतापूर्वक प्रकट करता है और दूसरों के कथन को भी आदर के साथ सुनता है। ऐसा व्यक्ति आत्म-प्रशंसा के दुर्गुणों से दूर रहता है और दूसरों के गुणों की यथोचित प्रशंसा करता है। वह अच्छी तरह जानता है कि अपने मुख से अपनी तारीफ करना ओछे व्यक्तियों का लक्षण है। सभ्य और शिष्ट व्यक्ति को तो अपना व्यवहार, बोल-चाल, कथोपकथन ही ऐसा रखना चाहिए कि उसके संपर्क में आने वाले स्वयं उसकी प्रशंसा करें।

बहुत-से लोग शिक्षा और अच्छे फैशन वाले वस्त्रों के प्रयोग को ही सभ्यता और शिष्टाचार का मुख्य अंग समझते हैं। पर यह धारणा गलत है। शिक्षित और बढ़िया पोशाक पहिनने वाला व्यक्ति भी अशिष्ट हो सकता है और गाँव का एक हल चलाने वाला अशिक्षित किसान भी शिष्ट कहा जा सकता है। शिष्टाचार में ऐसी शक्ति है कि मनुष्य बिना किसी को कुछ दिए लिए अपने और परायों का श्रद्धाभाजन, आदर का पात्र बन जाता है। पर जिसमें शिष्टाचार का अभाव है, जो चाहे जिसके साथ अशिष्टता का व्यवहार कर बैठते हैं उन लोगों के घर के आदमी भी उनके अनुगत नहीं होते और संसार में सब उनको अपने विरोधी नजर आते हैं।

एक प्राचीन कहावत है कि 'मनुष्य का परिचय उसके शिष्टाचार से मिल जाता है।' उसका उठना, बैठना, चलना, फिरना, बातचीत करना दूसरों के घर जाना, रास्ते में परिचितों से मिलना, प्रत्येक कार्य

एक अनुभवी को यह बतलाने के लिए पर्याप्त होता है कि वास्तव में व्यक्ति किस हद तक सामाजिक है ? इस दृष्टि से जब हम अपने पास-पड़ौस पर दृष्टि डालते हैं तो हमको खेद के साथ यह स्वीकार करना पड़ता है कि इस समय हमारे देश में से शिष्टाचार की प्राचीन भावना का ह्रास हो रहा है और आधुनिक शिक्षा प्राप्त नवयुवक प्रायः शिष्टाचार शून्य और उच्छृंखलता को आश्रय दे रहे हैं। कालेज और स्कूलों में पढ़ने वाले अधिकांश विद्यार्थी रास्ते में भी आपस में बातचीत में अकारण ही गालियों का प्रयोग करते और धक्का-मुक्की करते दिखाई देते हैं। दुकानदारी पेशे वाले भी हँसी-मजाक में साले, और 'बहिन' की गाली देकर बात करना मामूली बात समझते हैं। इन सबके उठने-बैठने का तरीके भी सभ्यता नहीं कहा जा सकता। इन बातों का विचार करके एक विद्वान् ने ठीक ही कहा है—

"हम बैठते हैं तो पसर कर, बोलते हैं तो चिंघाड़कर। पान खाते हैं तो पीक कुर्ते पर, खाने बैठे तो सवा गज धरती पर रोटी के टुकड़े और साग-भाजी फैला दी। धोती पहनी तो कुरता बहुत नीचा हो गया। कुरता मैला तो धोती साफ। बिस्तर साफ तो खाट गीली। कमरे में झाड़ू लगाई तो दरवाजे पर कूड़ा पड़ा। चलते हैं तो चीजें गिराते हुए, उठते हैं तो दूसरों को धकियाते हुए—ये सब तरीके ही किसी को सभ्य या असभ्य बनाते हैं। हम चाहें घर में हों या समाज में, इन सब बातों का हमको ध्यान रखना चाहिए।'

हमारे आचरण और रहन-सहन में और भी ऐसी अनेक छोटी-बड़ी खराब आदतें शामिल हो गई हैं जो अभ्यासवश हमको बुरी नहीं जान पड़तीं पर एक बाहरी आदमी को वे असभ्यता ही जान पड़ेंगी। उदाहरण के लिए किसी से कोई चीज उधार लेकर लौटाने का भी ध्यान न रखना। मँगनी की चीजों को लापरवाही से रखना और खराब करके वापिस करना। बाजार से उधार वस्तु खरीदकर दाम चुकाने का ध्यान रखना। किसी व्यक्ति को वायदा करके घर बुलाना और उस समय स्वयं बाहर चले जाना। चिट्ठियों का समय पर जवाब न देना, आपने कार्यालय में हमेशा देर करके जाना। इस प्रकार की सैंकड़ों बातें ऐसी हैं जिनसे मनुष्य की प्रतिष्ठा में अंतर पड़ता है और वह दूसरों की आँखों में हल्के दर्जे का प्रतीत होने लगता है।

त्रिविध शिष्टाचार—एक अनुभवी लेखक ने शिष्टाचार से विपरीत बातों को तीन श्रेणियों में बाँटा है—(१) वचन संबंधी (२) चेष्टा संबंधी (३) कर्म संबंधी। इनका संक्षेप में वर्णन करते हुए उन्होंने बतलाया है।

वचनात्मक शिष्टाचार में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि श्रोता की मर्यादा के अनुकूल आदरसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाए। बातचीत में आत्म-प्रशंसा करने—अपने मुँह मियाँमिट्ठू बनने की प्रवृत्ति को रोकना चाहिए और यथासंभव परनिंदा से भी बचना चाहिए। किसी की बात काटनी और उसके कथन में भूलें निकालते रहना भी शिष्टाचार के विरुद्ध है। बातचीत में आवश्यकता से अधिक विनोद भी अशिष्ट समझा जाता है1 मित्र मंडली में किसी एक ही विषय पर अथवा एक ही व्यक्ति के साथ संभाषण करने से अशिष्टता सूचित होती है। कई लोगों को बोलते समय "इसका क्या नाम"—"जो है सो" आदि पाद-पूरक शब्द या वाक्यांश बार-बार कहने की आदत पड़ जाती है, जो बहुधा दूसरों को अप्रिय या हास्यास्पद जान पड़ती है।

'चेष्टात्मक शिष्टाचार मनुष्य की मुखमुद्रा तथा शरीर के अन्यान्य अवयवों के संचालन से संबंध रखता है। चेहरे पर सदा गंभीरता का भाव धारण करने से मनुष्य का मिथ्याभिमान प्रकट होता है, इसलिए अन्य लोगों से मिलने पर थोड़ा-बहुत प्रसन्नतायुक्त मुस्कराहट प्रदर्शित करनी चाहिए। शोक में खिन्नता और श्रद्धा में नम्रता का भाव प्रकट करने की आवश्यकता है। किसी प्रश्न का उत्तर शब्दों के बदले सिर हिलाकर देना असभ्यता समझा जाता है। जब तक कोई विशेष कारण न हो तब तक किसी को विशेषकर स्त्रियों को सिर या हाथ के संकेत द्वारा न बुलाना चाहिए।"

'क्रियात्मक शिष्टाचार में उन सब कार्यों का समावेश होता है जो एक मनुष्य किसी व्यक्ति या समाज के सुभीते के लिए करता है। मनुष्य को प्रत्येक कार्य में अपने पड़ौसी की असुविधा का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। सड़क पर बायीं ओर चलना चाहिए और वृद्धों तथा स्त्रियों को रास्ता दे देना चाहिए। किसी के घर के पास या उसके द्वार के सामने खड़े होकर जोर-जोर से बात करना अशिष्टता है। जब तक विशेष आवश्यकता न हो तब तक किसी को बुलाने के लिए उसके घर के

किबाड़ खटखटाना ठीक नहीं होता। अपने घर आये मेहमानों का यथाशक्ति सत्कार करना शिष्टता का आवश्यक अंग है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वचन संबंधी शिष्टता और अनुशासन शिष्टाचार का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। बातचीत संबंधी इन सामान्य शिष्टाचार नियमों को तो सदा याद रखना चाहिए।

(१) जहाँ दो चार व्यक्ति निजी बात कर रहे हैं। वहाँ पास जाकर बैठना अनुचित है और बिना पूछे किसी प्रकार सम्मति देना भी मूर्खता है।

(२) बातचीत करते समय अगर कोई अनुचित या गलत बात मुँह से निकल जाए तो उसके लिए तुरंत क्षमा-प्रार्थना कर लेनी चाहिए।

(३) बातचीत करते समय केवल स्वयं ही न बोलते रहें, दूसरों को भी उतना ही मौका दें। जो दूसरों को न बोलने देकर अपनी ही बात सुनाते रहते हैं उनसे कोई बात करना पसंद नहीं करता।

(४) बातचीत में किसी से मतभेद हो जाने पर कठोर उत्तर देकर शीघ्र ही उसे झगड़े का रूप दे देना मूर्खता है। ऐसे अवसर पर यदि किसी की गलती भी बतलानी हो और जो कुछ कहना हो तो विनम्र शब्दों में ही कहना चाहिए जैसे 'मेरी राय में तो आप भूल रहे हैं' या 'आपको ठीक सूचना नहीं मिली' आदि। इस प्रकार के व्यवहार से कटुता नहीं बढ़ती और आगे चलकर मतभेद के मिटने में सहायता मिलती है।

(५) अनेक लोगों को साधारण बातचीत में भी अकारण गाली बकने की आदत पड़ जाती है। उसे न बुरा समझते हैं और न उसके स्तर के अन्य लोगों को उसमें कोई दोष जान पड़ता है। पर इस तरह मुँह से सदैव गाली या अश्लील शब्द निकलते रहना सभ्यता के विपरीत है। इस प्रकार मित्र मंडली से हँसी-मजाक में भी शिष्टता की सीमा का कभी उल्लंघन नहीं करना चाहिए। हो सकता है कि आपस में दो-चार अंतरंग मित्रों में ऐसी बातचीत प्रेमालाप समझी जाए, पर ऐसे लोगों के सामने भी आपके मुँह से गंदे शब्द निकल सकते हैं, जो उन्हें सज्जनोचित नहीं मानते। इसमें आपकी प्रतिष्ठा की हानि होगी।

(६) जिस किसी के साथ जो वायदा करो उसे पूरा करने का सदैव यथाशक्ति प्रयत्न करो। जिस काम को करने का विचार न हो उसका किसी को विश्वास मत दिलाओ।

(७) बातचीत के समय बीच-बीच में 'तकियाकलाम' के रूप में कोई अनावश्यक शब्द बोलते जाना या मुँह, नाक, कान, आँख, हाथ आदि अंगों को मटकाते जाना अविकसित बुद्धि के व्यक्तियों का लक्षण है।

(८) किसी बात को बहुत अधिक मत बढ़ाओ। बहुत-से लोगों की आदत होती है कि निस्सार बात को या जिससे हमारा कोई संबंध नहीं ऐसी बात को बड़े विस्तार के साथ कहने लग जाते हैं, चाहे सुनने वाले को वह बुरी लगती हो तो भी बार-बार रोककर जबरदस्ती अपनी बात सुनाते हैं। कई लोग श्रोता के सोने या ऊँघने लग जाने पर भी अपनी बातों का तांता बंद नहीं करते। ये सब ढंग वार्तालाप के दोष समझे जाते हैं।

(९) यद्यपि बात-बात में अंग्रेजों की तरह 'थैंक्यू' (धन्यवाद) कहते रहना हमारे देश की रीति नहीं तो भी किसी के उपकार या सहायता के लिए उसके प्रति किसी प्रकार का आभार प्रकट करना एक सज्जनोचित नियम हैं।

(१०) किसी के मुँह पर उसकी प्रशंसा करना कोई बहुत अच्छी बात नहीं है। यदि कोई आपके सामने ही आपकी प्रशंसा करने लगे तो उसको रोक देना या सामने से हट जाना चाहिए।

(११) यदि कोई व्यक्ति किसी से बातचीत कर रहा हो तो बीच में हस्तक्षेप करके अपनी बात छोड़ देना उचित नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार एक आदमी से बात-चीत को अधूरा छोड़कर दूसरे से बात प्रारंभ कर देना भी नियम के विरुद्ध है।

ये वचन संबंधी शिष्टाचार के थोड़े-से सामान्य नियम हैं। प्रत्येक स्थिति में इस संबंध में मुख्य बात जो ध्यान में रखने योग्य है, वह यह कि वाणी में हमेशा संयम रखा जाए। जीभ मनमाने ढंग से न चलती रहे अपितु वह वश में रहे। जितना और जैसा आवश्यक है उतना और वैसा ही बोलें तथा उसकी दूसरे पर क्या प्रतिक्रिया होगी, यह ध्यान में रखा जाए, क्योंकि वाणी का प्रमुख उद्देश्य भाव संप्रेषण और विचार-संप्रेषण ही है। वह उद्देश्य पूरा हो रहा है या नहीं, जिससे बात की जा रही है, उसका स्तर मनोभाव, स्थिति और प्रवृत्ति क्या है तथा उस पर हमारी बात का सही प्रभाव होगा या नहीं, जो हम उस पर डालना चाहते हैं, यह ध्यान रखना चाहिए।

□□

वाक्-कौशल व्यवहार-कुशलता का प्राथमिक चरण

समर्थ गुरु रामदास ने कहा—"संसार भर में हमारे मित्र मौजूद हैं और सारे संसार में शत्रु भी। परंतु उन्हें प्राप्त करने की कुंजी जीभ के कपाट में बंद पड़ी है।" इस कथन का यही अर्थ है कि व्यक्ति का परिचय, संपर्क और प्रभाव क्षेत्र उसकी वाक्पटुता पर निर्भर है। जो लोग वार्तालाप में कुशल होते हैं वे हर जगह अपने मित्र खोज लेते हैं, अनजान लोगों को प्रथम मुलाकात में ही अपना बना लेते हैं और अपना प्रयोजन पूरा कर लेते हैं। महान् कार्यों और बड़े उद्देश्यों से संसार क्षेत्र में उतरने वाले ईसा और बुद्ध से लेकर गांधी और विवेकानंद तक केवल इसी शक्ति के सहारे अपने अभियान में सफल हुए हैं। महान् कार्यों के लिए ही नहीं बात-चीत करने में चतुर और चालाक ठग जाल-साज लोग भी अनजान, अपरिचितों से संपर्क साधकर उनके हृदय में अपना स्थान बनाकर अपना मतलब सिद्ध कर लेते हैं और चलते बनते हैं। हालांकि उनकी करतूतें औचित्य और न्याय की दृष्टि से अवांछनीय तथा अपराधपूर्ण ही हैं। पर इतना तो मानना ही होगा कि वे अपनी इसी क्षमता का उपयोग कर इसी में सफल हो जाते हैं।

व्यावसायिक क्षेत्रों में भी जीभ की कमाई खाने वाले लोगों का एक स्वतंत्र वर्ग है। वक्ता, गायक, प्रचारक से लेकर औद्योगिक व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के अभिकर्त्ता और प्रतिनिधि तक अपनी वाक् चातुरी के बल पर जिन व्यक्तियों से संपर्क साधते हैं उनसे अपनी बात मनवा लेते हैं। इस वर्ग में वाणी ही एक ऐसा साधन है जिसके बल पर नए से नया व्यक्ति बिना कोई अतिरिक्त पूँजी लगाए अपने व्यवसाय में सफल हो जाता है। व्यापारियों और दुकानदारों के यहाँ ऐसा भी प्रायः देखने में आता है कि ग्राहक उनके पास किसी वस्तु

का नमूना देखने और भाव जानने के लिए जाता है और माल खरीदकर ही लौटता है।

जब वाक्-कौशल के बल पर व्यापारिक और व्यावसायिक क्षेत्र के लोग सफल हो जाते हैं तो क्या कारण है कि कोई व्यक्ति ऐसी शिकायत करे कि मेरी बात कोई मानता ही नहीं, मेरा कोई मित्र नहीं, जिससे बात करता हूँ वही मेरा शत्रु बन जाता है। इस शिकायत का अधिकांश कारण व्यक्ति का बात-चीत करने का ढंग है। वह जिससे भी बात करता है कहीं न कहीं ऐसी भूल कर जाता है जो श्रोता के अंतःकरण को चोट कर जाती है और वह उसके प्रति कोई अच्छी धारणा नहीं बना पाता।

मित्र बनाने में ही नहीं, कर्मक्षेत्र में सफल होने तथा अन्य व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करने के लिए व्यक्ति का व्यवहार कुशल होना आवश्यक है और व्यवहार कुशलता का प्राथमिक सोपान है व्यक्ति का वार्तालाप में कुशल होना। इस संबंध में विख्यात विचारक स्वेट मार्डेन ने कहा है—"यदि आप अपनी बात साफ ढंग से नपे-तुले शब्दों में तथा सधी-बँधी आवाज में व्यक्त करके सुनने वाले को प्रभावित कर सकते हैं तो समझ लीजिए कि आपके पास एक हथियार है जिससे सफलता आपकी चरणदासी बन सकती है।"

श्रेष्ठ वाक्पटु होना, लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना तथा उनसे सहयोग प्राप्त करने के लिए अपनी बात-चीत में प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करना एक उपलब्धि है जो इन्हीं प्रयोजनों के लिए अर्जित और विकसित की गई अन्य उपलब्धियों से कहीं श्रेष्ठ है। वाक्चातुर्य के गुण से संपन्न अपने संभाषण द्वारा संपर्क में आए जनों को प्रभावित करने वाले वाक्शक्ति से संपन्न वे व्यक्ति जो अपने मंतव्य को रुचिकर ढंग से सामने वाले के सम्मुख स्पष्ट कर सकें—उन व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक सहयोग प्राप्त कर सकते हैं जो इन गुणों से रहित हों।

लेकिन देखा जाता है कि अधिकांश व्यक्ति जिनमें पढ़े-लिखे और सुशिक्षित व्यक्ति भी हैं वह अपनी वाणी में प्रभाव उत्पन्न कर नहीं पाते जो कि एक अनपढ़ किंतु चुस्त व्यक्ति कर लेता है। इस कारण उन्हें प्रायः सफलताओं के लिए भी ठोकरें खानी पड़ती हैं और अपने

वांछित लक्ष्य की तुलना में आत्यंतिक न्यून सफलता मिलती है। मानते हैं कि शिक्षा, योग्यता, प्रतिभा और ज्ञान का अपना महत्त्व और अपना स्थान है, पर व्यक्ति को व्यवहार क्षेत्र में सफल होने के लिए वाक्पटुता के अभाव में ये विशेषताएँ भी लूलीलँगड़ी सिद्ध होंगी। क्योंकि जिन व्यक्तियों को अपनी इस विशिष्टता से परिचित कराना है उनसे परिचय का माध्यम तो बात-चीत ही है और यह भी सच है कि इन गुणों से रहित व्यक्ति जो संभाषण को थोड़ा भी प्रभावशाली बना लेते हैं, उन्हीं क्षेत्रों में जिनमें कि उपरोक्त जन-कार्य करना चाहते हैं, उससे आगे निकल जाते हैं।

यहाँ कहने का आशय यह नहीं है कि सफलता की सारी संभावना केवल वाक्चातुरी पर ही निर्भर है। लेकिन कहा यह जा रहा है कि शिक्षा योग्यता और प्रतिभा के साथ-साथ व्यक्ति का व्यवहार कुशल होना भी आवश्यक है और व्यवहार कुशलता के लिए वाक्पटुता सर्वप्रथम अनिवार्य है। वाक्पटुता क्यों आवश्यक है इसके लिए एक विद्वान की यह उक्ति उल्लेखनीय है—"आप भले ही अच्छे गायक हों लेकिन हो सकता है कि आपको सारे संसार की यात्रा कर लेने के बाद भी अपनी कला का प्रदर्शन करने का अवसर न मिले। आप कहीं भी जाएँ किसी भी समाज में रहें, जीवन और प्रतिभा के क्षेत्र में आपकी स्थिति कितनी भी अच्छी क्यों न रहे, फिर भी आपको अपनी कला के प्रदर्शन का अवसर बात-चीत के द्वारा ही प्राप्त करना पड़ेगा।"

वास्तव में हमारी उपलब्धियों और विशेषताओं की संख्या चाहे कितनी भी क्यों न हो लेकिन तब तक हम अपनी विभूतियों का परिचय किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं दे सकते जब तक कि हमें भली-भाँति बात-चीत करने की कला न आती हो। वस्तुतः बात-चीत एक कला है अन्यथा बातें तो गूँगे-बहरों को छोड़कर सभी कोई करता और सुनता है। लेकिन कौन किसका किस प्रकार का प्रभाव ग्रहण करता है ? इसका आकलन किया जाए तो यही ज्ञात होगा कि कई लोगों की बातें उबा देने वाली या दूसरों का मन खट्टा कर देने वाली अथवा हृदय को चोट पहुँचाने वाली होती हैं। कई व्यक्तियों की बातें सुनकर ऐसा लगता है कि उसकी बात का न सिर है न पैर। न

तो वह अपने शब्दों का प्रयोग समझ बूझकर करता है जिससे कि श्रोता प्रभावित हो सके और न ही वह यह जानकर बातें करता है कि किस अवसर पर कैसी बात करनी है ? क्योंकि उसे इस संबंध में कोई ज्ञान ही नहीं है, फलतः उसकी बातें बोरियत लाने वाली और अप्रासंगिक ही हो जाती हैं।

संभाषण में कुछ व्यक्ति इतने सतर्क और सावधान रहते हैं कि उन्हें सब कुछ ज्ञान रहता है। किस अवसर पर कैसी बात करनी चाहिए ? सामने वाला हमारी बातों में रुचि ले रहा है अथवा बोर हो रहा है ? भाषा में कहीं उथली, दिखावटी और जबरदस्ती ठूँसी गई वाक्यावलि तो नहीं आ रही ? ऐसा ही अन्य आवश्यक बातों का ध्यान रखकर जो लोग बातें करते हैं उनकी बातें प्रभावोत्पादक हो जाती हैं।

वाक्चातुर्य न तो किताबें पढ़ने से आता है और न किसी के उपदेश सुनकर। अंतरंग विषय होने से उसकी प्राप्ति स्वविवेक से ही होती है। फिर भी कुछ ऐसे सूत्र हैं जिनके आधार पर स्वविवेक को जागृत किया जा सकता है और अनुभव द्वारा वाक्पटुता अर्जित की जा सकती है। वाक्पटुता के लिए बेझिझक होकर बात करना सोच-समझकर अपना पक्ष संतुलित ढंग से सामने वाले व्यक्ति के समक्ष रखना, भाषा में मधुरता, शालीनता और सौहार्द्रता का समावेश करना, वाक्यों और शब्दों का सही उच्चारण करना, अपनी बात संक्षिप्त और अर्थपूर्ण बनाना, दूसरों की बात भी उसी ध्यान से सुनना जैसी कि हम अपेक्षा रखते हैं, दूसरे ध्यान से हमारी बात सुनें, उनकी रुचि का ध्यान रखना आदि कुछ ऐसी सावधानियाँ हैं जिनका समावेश हम अपने वार्तालाप में कर सकें तो व्यवहार-कुशलता प्राप्त करने की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

वार्तालाप में जिन बातों का सर्वाधिक ध्यान रखना आवश्यक है—उनमें प्रथम है हमारी भाषा शिष्ट, मृदु और रोचक हो। शिष्ट भाषा का अर्थ है कि व्यक्ति ऐसे शब्दों का प्रयोग न करें जो अभद्र, गंदे और भद्दे हों। उदाहरण के लिए कई व्यक्तियों की आदत रहती है कि एक बात में बार-बार अपशब्दों का प्रयोग करते हैं। यह आदत उनके स्वभाव का अंग-सी बन जाती है। अनेक लोग जान-बूझकर

अश्लील वाक्यों का भी प्रयोग कर जाते हैं। ऐसा करते हुए वे ये भले ही मानें कि जिनसे हम बात कर रहे हैं वह हँसेगा और माना कि श्रोता हँस भी ले। परंतु इससे बात-चीत में छिछलापन आ जाता है। अपशब्दों और अश्लील वाक्यों के अधिक प्रयोग से वार्तालाप के विषय की स्वाभाविक गंभीरता समाप्त हो जाती है और उस विषय में छेड़ी गई चर्चा का अपेक्षित परिणाम नहीं होता। शिष्टाचार का तकाजा तो यह है कि हँसी-मजाक भी अशालीन और अपभाषा में न की जाए क्योंकि धीरे-धीरे यही प्रयोग आदत और स्वभाव बन जाते हैं। ऐसे लोगों की संगति न तो अच्छी कही जाती है और न उन्हें सभ्य समाज में अच्छी दृष्टि से देखा जाता है।

कदाचित यह आदत वाक्चातुर्य प्राप्त करने वाले नए अभ्यासियों को लग गई हो तो उन्हें तुरंत इस पर नियंत्रण और परिष्कार करना चाहिए। इस नियंत्रण में दूसरा सूत्र महत्त्वपूर्ण सहायता देता है जो सामान्य और इन आदतों से मुक्त लोगों के लिए भी आवश्यक है। वह सूत्र है—सोच समझकर बोलना। जिन अवसरों पर हमें चुप रहना चाहिए, गंभीर होना चाहिए अथवा अपनी बात नहीं छेड़ना चाहिए उन अवसरों पर इन मर्यादाओं का उल्लंघन हमें हास्यास्पद, निंदा और 'अपनी ही गाने वाले' को हीन संज्ञा से युक्त बना देता है। प्रायः कई व्यक्तियों को जिस विषय में उनकी जानकारी नहीं होती, उस विषय पर भी बातूनी आदत से लाचार होकर बोलते रहते देखा जाता है। ऐसा प्रायः अपनी अल्पज्ञता को छुपाकर स्वयं को सर्वज्ञ सिद्ध करने के अहंकार से ही होता है। सुनने वालों में से भले ही कोई हमारे मिथ्यात्व को न पकड़ पाए परंतु जाने-अनजाने ऐसी बात निकल ही जाती है जिससे हमारी अज्ञानता व्यक्त होती है और विचारशील श्रोता उसे पकड़ लेते हैं। ऐसी स्थिति में कभी सच बात भी कही जाए तो कलई खुल जाने के बाद लोग हमें गप्पी ही समझने लगते हैं।

जीवन में कई ऐसे प्रसंग आते हैं जिनका तकाजा रहता है कि गंभीर रहा जाए। जैसे कोई शोकाकुल हो या किसी का कोई संबंधी मर गया हो। उसके पास शोक संवेदना व्यक्त करने के लिए जाते समय गंभीरता एक आवश्यकता है और कोई व्यक्ति यदि अपनी

खुश—मिजाजी जताने के लिए अप्रासंगिक चर्चा छेड़ देते हैं तो उन्हें निंदा ही मिलेगी। ऐसा ही अवसर वार्तालाप के समय भी आता है। जब दूसरा भागीदार अपनी बात कह रहा हो तो पहले भागीदार के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी हो जाता है कि वह पहले उसकी बात को ध्यान पूर्वक सुने और उसमें रुचि ले। इसके विपरीत बीच-बीच में अपनी गाने वालों को बातूनी और अपनी ही ढपली बजाते रहने वाला कहा जाएगा। बाद में उससे वह व्यक्ति बात करने के लिए भी उत्सुक नहीं दिखाई देगा।

वाक्चातुर्य के लिए तीसरा प्रमुख सूत्र है—दूसरों की रुचि का ध्यान रखना। संपर्क में आने वाले सभी लोग एक-सी रुचि के नहीं होते। सबकी रुचियाँ भिन्न-भिन्न रहती हैं। कोई कला का शौकीन है, तो कोई संगीत का, किसी को सामाजिक समस्याओं पर चर्चा अच्छी लगती है तो कोई अंतर्राष्ट्रीय विषयों पर बात-चीत करना पसंद करता है। खाली समय में वाक् साधना की जा रही हो तब प्रति पक्षी की रुचि का ध्यान आवश्यक है। जहाँ तक हो सके अपनी जानकारी के अनुसार उसी विषय की बात की जाए और उन विषयों में कोई जानकारी न हो तो धैर्य पूर्वक प्रश्न पूछकर अपना ज्ञान बढ़ाना भी एक अच्छा तरीका है। इससे एक अच्छे श्रोता बनने और ज्ञान का क्षेत्र व्यापक होने का दोहरा लाभ मिलेगा।

रुचि के संबंध में एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि सामने वाला व्यक्ति हमारी बातों में रस ले रहा है या नहीं। यदि नहीं तो विषयांतर कर देना ही ठीक है। बात-चीत को समाप्त ही करना हो अथवा सामने वाला अरुचि रखता हो तो संभव है वह किसी जल्दी में हो और यह भी अनुभव कर रहा हो तो वार्तालाप को सौहार्द्रता पूर्वक पूराकर लिया जाए।

बात-चीत के समय अपनी बात संक्षिप्त में या अवसर के अनुसार विस्तार करने के लिए भी सामाजिक सूझ का ध्यान रखना चाहिए। जहाँ तक हो सके अपनी बात को संक्षिप्त और अर्थ पूर्ण बनाएँ। इससे गलतियाँ होने की संभावना भी अधिक नहीं रहती और वार्तालाप की अर्थवत्ता भी बनी रहती है। कुशल बात-चीत के लिए बातूनी होना आवश्यक नहीं है। वस्तुतः तो वाक्चातुरी और अधिक

बोलने में कोई संबंध ही नहीं है। ये दोनों अलग-अलग बातें हैं। वाक्चातुर्य जहाँ गुण है, वहीं वाचालता की गणना दोषों में की जाती है। अतः वाक्पटुता हासिल करने के लिए यह भ्रम मन से निकाल देना चाहिए कि वाक्पटु को बोलते रहना चाहिए।

पाँचवीं और अंतिम बात जो वाक्पटुता के लिए आवश्यक है वह यह कि जिससे बात की जा रही हो उसके हृदय में सद्भाव, आत्मीयता को जागृत करना और कथनी द्वारा ही नहीं करनी द्वारा भी स्वयं को उसके अंतःकरण में एक शुभ चिंतक के रूप में प्रतिष्ठित करना। इसके लिए उसके व्यक्तित्व, परिवार और आर्थिक सामाजिक स्थिति को जानने का प्रयास किया जा सकता है। स्पष्ट है कि जब किसी से उसके निज के संबंध में, पत्नी और बच्चों के संबंध में, उनके स्वास्थ्य, कुशलता और वर्तमान सुख दुःखों के संबंध में प्रश्न किए जाएँ तो वह खुलेगा ही और जब कोई व्यक्ति अपनी समस्याएँ कहने लगे तो एक मित्र की भाँति उचित परामर्श देना चाहिए। उचित परामर्श के लिए भावना जगत में स्वयं को उस स्थिति में होने का अभ्यास नब्बे प्रतिशत सही निष्कर्ष पर पहुँचने का मार्ग है। यदि उसके विचार अपने से कुछ अलग हों तो ही दस प्रतिशत उक्त उद्देश्य की पूर्ति में असफलता की संभावना है अन्यथा शत-प्रतिशत हम उसे अपना अंतरंग मित्र बना लेंगे और उस पर अपना प्रभाव जमा लेंगे।

समाज में रहते हुए किसी भी व्यक्ति को किसी भी कार्य के लिए दूसरों का सहयोग और संपर्क अनिवार्य हो जाता है। कहना न होगा कि इसके अर्जन का प्रथम उपाय वार्तालाप है और जो व्यक्ति कुशल बात-चीत करने वाला हो वह कभी निराश नहीं होता। आत्म-विकास के विषय में पाठकों का मार्ग-दर्शन करते हुए लेखक ने तो यहाँ तक लिखा है—"क्या आप निर्धन हैं, निराश हैं ? क्या आप समझते हैं कि जीवन में प्रगति का कोई अवसर आपको नहीं मिल सका ? क्या आपकी महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी नहीं हुईं ? तो आप चिंता मत कीजिए। एक अच्छे बात-चीत करने वाले बन जाइए। बस आपके सपने शीघ्र ही पूरे हो जाएँगे।"

❐ ❐

अधिक न बोलना चाहिए

यों तो आध्यात्मिक दृष्टि से मौन का महत्त्व अनंत है। मौन को मानसिक तप कहा गया है, जिसकी साधना मनुष्य को मुनि बना देती है। मौन का आश्रय लिए बिना कोई भी मुमुक्षु लक्ष्य की ओर अग्रसर नहीं हो सकता। जीवन की साधनाओं में मौन का विशेष स्थान है। किंतु लौकिक दृष्टि तथा सांसारिक व्यवहार में भी इसका मूल्य, महत्त्व कम नहीं है।

मौन से मनुष्य में गंभीरता की वृद्धि होती है। गंभीर व्यक्ति का आदर करने के लिए सभी तैयार रहते हैं। लोगों का उसमें विश्वास बढ़ता है। यहाँ तक कि पारिवारिक प्रसंगों तथा झगड़ों में लोग ऐसे बोझ वजन वाले व्यक्तियों को पंच तक बना लेते हैं और उसके निर्णय को शिरोधार्य करते हैं। मोहल्ले बस्ती में अल्पभाषी बड़े-बूढ़ों को सभी लोग आदर के भाव से देखते हैं। कम वाचालता अथवा अल्पभाषण के आदर पर यह सामाजिक आदर भाव कुछ कम मूल्यवान नहीं है।

यद्यपि सामाजिक सम्मान में व्यक्तिगत लाभ का दृष्टिकोण रखना उचित नहीं है। लोगों का आदर-भाव एक बड़ा लाभ है। इससे व्यक्ति का आचरण, विचार, भाव तथा आत्मा सबमें निखार एवं अनुशासन आता है, जिससे जीवन में एक अनिवर्चनीय शीतलता एवं संतोष की अनुभूति आती है। उत्तरदायित्व का भाव बढ़ता है जो कि ज़ीवन के हर क्षेत्र में उपयोगी होता है। तथापि इससे अन्य अनेक प्रकार के अनचाहे स्थूल लाभ भी होते हैं और हो सकते हैं। लोक-प्रिय व्यक्ति का कोई काम रुकने नहीं पाता। उसके दुःख-दर्द तथा अभाव आवश्यकता को लोग अपना समझते और हर समय यथा-साध्य सहायता -सहयोग करने को तैयार रहते हैं। लौकिक दृष्टि से यह लाभ जीवन विकास में कम उपयोगी नहीं होता।

जीवन में मौन का समावेश कर लेने से अथवा अल्पभाषी स्वभाव का विकास कर लेने पर निश्चय ही व्यक्तित्व में गरिमा की वृद्धि होती है।

मुख पर एक आभा का आभास वास करने लगता है। गरिमावान व्यक्ति परिचितों में ही नहीं अपरिचितों के बीच विदेश अथवा अनजान जगहों में अपना स्थान बना लेता है। बहुत बार रेलों, स्टेशनों तथा सार्वजनिक स्थानों आदि में लोग चुपचाप दूर खड़े व्यक्ति के लिए स्थान की व्यवस्था कर देते हैं, अपना स्थान तक देने को तैयार हो जाते हैं, जबकि स्थान के लिए झकझक करने और लड़ने-झगड़ने वाले लोगों की सुविधा का कम ध्यान रखते हैं। बहुधा देखा जाता है तेज तर्रार और वाद-विवाद करने वाले लोग खडे रहते हैं और मौन तथा किनाराकश लोगों को बैठने का स्थान मिल जाता है। इस प्रकार की अनेक छोटी-मोटी सुविधाएँ जीवन में अनेक बार बड़े-बड़े कार्य संपादित कर देती हैं, जबकि छोटी से छोटी असुविधा कुछ न कुछ प्रत्यक्ष न सही अप्रत्यक्ष मानसिक हानि तो करती ही है।

मित-भाषण अथवा मौन से वाणी में प्रभाव बढ़ता है। इसमें आध्यात्मिक प्रभाव क्या और कितना आ जाता है इस बात को छोड़कर यदि लौकिक प्रभाव पर विचार किया जाए तो एक मोटी-सी बात तो यह होती हैं कि अनावश्यक वाणी का अपव्यय न करके आवश्यकतानुसार समय पर बोला या बात की जाती है तो मौन द्वारा संचित शक्ति भी शब्दों के साथ बाहर निकलती है, विश्राम पाई हुई स्वर नलिकाएँ परिपूर्ण स्वर निष्क्रमण करती हैं जिससे न केवल आवश्यकतानुसार कथन का ही सम्मान होता है बल्कि शक्ति संपन्न धीर गंभीर स्वर भी अपना एक विशेष अर्थ रखता है।

बकवासी की तरह बहुधा लोग मित-वक्ता की वाणी में अमृत अथवा असत्य का संदेह नहीं करते और अधिकतर उसके कथन का मूल्यांकन ही करते हैं। समाज में वचनों का मूल्यांकन कम महत्त्व की बात नहीं है। इससे साख बढ़ती और विश्वास पूर्ण वातावरण का निर्माण होता है।

मौन रहने से सुख पर एक सौम्यता तथा सरलता का भाव विकास करने लगता है, जिससे स्थिति आदि भाव भंगिमाओं में ही नहीं दृष्टि में आकर्षण का चमत्कार उत्पन्न हो जाता है, जो परकीयों को भी अपना और अनेक अवस्थाओं में विरोधियों को भी सहयोगी बना लेता है। इस सामान्य लाभ को शुभ लाभ की सूची में रखा जा सकता है।

अमौन अथवा वाचालता बेकार का बातूनी बना देती है। वाचाल स्वभाव का व्यक्ति एक छोटे तथा महत्त्वहीन प्रसंग पर बोलता बकता चला

जाता है, जिससे स्वाभाविक है कि उसकी बातों में अतिरेकता, अतिशयता, अतिशयोक्ति, व्यर्थता, अनुपयुक्तता, अनुपयोगिता यहाँ तक कि अनर्गलता का समावेश हो जाए। किसी के कथन से यह दोष जल्दी ही पहचान लिए जाते हैं तब लोग उसकी बातों पर विश्वास तो क्या ध्यान देना तक छोड़ देते हैं। अनेक लोग उससे बात करने से कतराते और चतुर लोग तो मखौल तथा उपहास तक करने लगते हैं। वाचाल व्यक्ति झूँठे के नाम से बदनाम हो जाता है और बहुत बार लोग उसकी सही बात को भी लंतरानी समझ लेते हैं। मौन अथवा मित भाषण इस वाचालता के दोष से बचाता और उससे होने वाली हामि से अपनी रक्षा करता है जो एक लाभ ही माना जाएगा।

वाचालता बहुत बार निंदा, स्तुति, वाद-विवाद, अनबन कहा सुनी और यहाँ तक कि कभी-कभी कटुता तथा गाली-गलौज तक की नौबत ला देती है, जबकि मित-भाषण में इस प्रकार की कोई संभावना नहीं रहती। कम बोलने का अभ्यासी चुपचाप दूसरे की बात सुनता रहता है, उसे बोलने वाद-विवाद अथवा कहा सुनी मे पड़ने के लिए तरंग ही नहीं आती। ऐसी दशा में उससे किसी की अप्रियता होने का प्रश्न ही नहीं उठता। बल्कि वह दो के बीच में समाधान करने वाला पंच बना लिया जाता है जिससे उसकी मान्यता बढ़ती ही है।

मौन से मनुष्य में सहन शक्ति की वृद्धि होती है। इसका एक कारण तो यह है कि अधिक बात करने से मनुष्य की जिस प्राणशक्ति का व्यय होता है मौन के अभ्यास में उसकी बचत होती रहती है। शरीर में शक्ति का संचय सहन शक्ति बढ़ा देता है जो जितना निर्बल होता है वह उतना ही असहनशील होता है। यह एक स्वास्थ्य संबंधी नियम है। निर्बल व्यक्ति की तरह शक्तिवान् व्यक्ति को जल्दी क्रोध नहीं आता। अनेक अप्रिय प्रसंगों को वह हँसकर टाल जाने की क्षमता रखता है। निश्चय ही मौन साधना से उस शारीरिक तथा मानसिक शक्ति का विकास किया जा सकता है। कहावत प्रसिद्ध है कि "एक चुप सौ बलाओं को टालती है।" यह जहाँ किसी अप्रिय प्रसंग के समय मौन हो जाना संघर्ष टालने में सहायता करता है, वहाँ मौन का सामान्य अभ्यासी अपने मितभाषी अथवा मौन स्वभाव के कारण ऐसी परिस्थिति का प्रारंभ ही नहीं होने देता। बहुत बोलने और बात करने से एक छोटी-सी बात भी तूल पकड़ जाती है। उत्तर-प्रत्युत्तर से क्रोध बढ़ता है और बात सुलझाने के स्थान पर अधिक

उलझ जाती है। अप्रिय प्रसंग के समय मौन रहने वाला पक्ष प्रायः जनमत को अपने पक्ष में कर लेता है। इस प्रकार मौन के आधार पर सहनशीलता आती है और सहनशीलता के आधार पर संघर्ष अथवा कलह के दुष्परिणामों से बच जाना लाभ का ही विषय है।

गोपनीयता मौनता की विशेष देन है। वांचाल व्यक्ति न तो अपने रहस्यों अथवा मंतव्यों की रक्षा कर सकता है और न दूसरे के। उसकी अनियंत्रित जुबान भेद उद्घाटन किए बिना चैन ही नहीं पाती। जबकि मौन द्वारा अपनी वाणी पर अधिकार वाला व्यक्ति रहस्यों को आसानी से हृदय में रखे रहता है। व्यवसाय, व्यापार तथा राजनीति के क्षेत्र में गोपनीयता का बहुत मूल्य है। संगोपन भाव वाले व्यक्तियों की वेदना, पीड़ा तथा अभावों को लोग नहीं जान पाते। संसार में दुष्टों, प्रवंचकों, विरोधियों, असद्भाषियों तथा बिडंबकों की कमी नहीं। यह लोग दूसरे के भेद तथा रहस्यों अथवा मंतव्यों को जानकर हानि पहुँचाने की कोशिश किया करते हैं। मौनता का अभ्यास बहुत हद तक इन असज्जनों से रक्षा किए रहता है। बहुत-से लोग तो परदेशों, बाजारों, यात्राओं तथा अपरिचितों में केवल इसी कारण ठगे जाते हैं कि अपनी व्यर्थ की वाचालता के कारण वे जल्दी ही खुल जाते हैं और अपने रहस्य को बतला दिया करते हैं।

वाणी का अपव्यय न करने तथा मौनता को महत्त्व देने से विचार शक्ति बढ़ती है। उसकी बुद्धि अपेक्षाकृत अधिक स्थिर तथा संतुलित रहती है। संतुलित विचारों वाला हानि-लाभ, हित-अहित के प्रसंगों पर बड़े धैर्यपूर्वक सोच-समझ सकता है संकट अथवा आपत्ति के समय मौन द्वारा प्रखर की हुई विचार शक्ति बड़ी ही सहायक होती है। कभी देखा जा सकता है कि जब मनुष्य किसी प्रसंग पर सोचना चाहता है तब वह एकांत की तलाश करता है। न तो वह उस समय बोलता और न किसी से बात ही करता है। बोलना और विचार दोनों क्रियाएँ एक साथ नहीं हो सकतीं। विचारक जितने गहरे मौन में उतर जाता है उतना समस्याओं का सार्थक हल खोज लाता है। महात्मा गाँधी को जब किसी विकट समस्या पर विचार करना होता था, तब-तब वे अनेक दिनों का मौन व्रत ले लिया करते थे।

मौनता का गुण कार्य में एकाग्रता तथा दक्षता बढ़ा देता है। जो जितना मौन रहकर काम करता है वह उतना ही अधिक कुशल तथा सही काम कर लिया करता है। बातूनी का काम कभी भी पूरी मात्रा में सही-सही नहीं हो पाता। इस बात का एक बहुत बढ़िया उदाहरण महाभारत के संबंध में प्रसिद्ध है।

भगवान् वेदव्यास ने महाभारत लिखने का विचार बनाया तब उन्हें एक लेखक की आवश्यकता अनुभव हुई क्योंकि उस वृहद् ग्रंथ के प्रसंगों पर विचार और लेखन क्रिया एक साथ नहीं चल सकती थी। उससे अपेक्षाकृत अनेक गुना समय लगता। वे बोलते जाएँ और कोई लिखता जाए—इस प्रकार से ही वह महान् कार्य सुविधापूर्वक अपेक्षित समय में हो सकता था। निदान उन्होंने गणेश जी का सहयोग प्राप्त किया। पूरा महाभारत लिखा जाने के बाद व्यास जी ने पूछा—गणेश जी आप इस बीच में बोले बिलकुल नहीं। गणेश जी ने कहा कि यदि मैं बीच-बीच में बात करता चलता तो निश्चय ही आपका यह काम होना कठिन ही नहीं भार बन जाता। बोलने से मनुष्य की कार्यशक्ति का ह्रास होता है जबकि मौनतापूर्वक कार्य करने से कार्य में रुचि आती है और जल्दी होता है। इस प्रकार यदि विचार किया जाए तो पता चलेगा कि मौनता को महत्त्व देने से आध्यात्मिक ही नहीं, न जाने कितने लौकिक लाभ होते हैं। जहाँ वाचालता एक दुर्गुण है वहाँ मौनता एक दैवी गुण है जिसका अपने में विकास करना ही चाहिए। किंतु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मनुष्य बिलकुल बात ही न करे। मौनता का मूल मंतव्य यह है कि जितना आवश्यक हो उतना ही बोला जाए। अनावश्यक वार्तालाप न करना अथवा यों ही निरर्थक दिन भर हा-हा-हू-हू न करते रहना भी मौन ही है। जिह्वा पर संयम रखकर और वाणी विषयक मितव्ययिता का अवलंब लेकर मनुष्य को अपनी शक्तियों में वृद्धि करना ही चाहिए। वह उसके जीवन के लिए बड़ा ही लाभदायक एवं हितकर होगा। वाक्-साधना निश्चय ही सिद्धिदात्री है।

❑ ❑

मुद्रक: युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा